अध्याय ५

प्रद्युम्न मिश्र का रामानन्द राय से उपदेश लेना

पाँचवे अध्याय का निम्नलिखित सारांश श्रील भक्तिविनोद ठाकुर द्वारा अपने *अमृत-प्रवाह-भाष्य* में दिया गया है। श्रीहट्ट का एक निवासी प्रद्युम्न मिश्र श्री चैतन्य महाप्रभु से मिलने कृष्ण तथा उनकी लीलाओं के विषय में सुनने के लिए उनके पास आया। किन्तु महाप्रभु ने उसे श्रील रामानन्द राय के पास भेज दिया। श्रील रामानन्द राय मन्दिर में देवदासी नृत्यांगनाओं को प्रशिक्षण दे रहे थे। जब प्रद्युम्न मिश्र ने यह सुना, तो वह श्री चैतन्य महाप्रभु के पास लौट आया। किन्तु महाप्रभु ने श्रील रामानन्द राय के चरित्र का विस्तार से वर्णन किया। तब प्रद्युम्न मिश्र रामानन्द राय से आध्यात्मिक सत्य के विषय में सुनने के लिए पुन: उनके पास गया।

बंगाल के एक ब्राह्मण ने श्री चैतन्य महाप्रभु के कार्यकलापों के विषय में एक नाटक की रचना की, जिसे महाप्रभु के संगियों को दिखाने के लिए वह जगन्नाथ पुरी गया। जब श्री चैतन्य महाप्रभु के सचिव स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने यह नाटक सुना, तो उन्हें इसमें मायावादी दर्शन की झलक मिली; अत: उन्होंने लेखक से इसकी ओर संकेत किया। यद्यपि स्वरूप दामोदर ने नान्दी श्लोक के गौण अर्थ के सन्दर्भ में पूरे नाटक की ही भर्त्सना की, फिर भी उन्होंने ब्राह्मण को तुष्ट कर दिया। इस तरह वह ब्राह्मण स्वरूप दामोदर गोस्वामी के प्रति अत्यधिक कृतज्ञ हुआ, उसने अपने पारिवारिक सम्बन्ध त्याग दिये और श्री चैतन्य महाप्रभु के संगियों के साथ जगन्नाथ पुरी में रहने लगा।

বৈগুণ্য-কীট-কলিতঃ পৈশুন্য-ব্রণ-পীড়িতঃ ।
দৈন্যার্ণবে নিমগ্নোঽহং চৈতন্য-বৈদ্যমাশ্রয়ে ॥ ১ ॥

वैगुण्य-कीट-कलितः पैशुन्य-व्रण-पीड़ितः ।
दैन्यार्णवे निमग्नोऽहं चैतन्य-वैद्यमाश्रये ॥ १ ॥

वैगुण्य—भौतिक कार्यकलापों के; **कीट**—कीड़ों द्वारा; **कलितः**—काटा हुआ; **पैशुन्य**—ईर्ष्या के; **व्रण**—छालों द्वारा; **पीड़ितः**—पीड़ित; **दैन्य-अर्णवे**—विनम्रता के समुद्र में; **निमग्नः**—डूबा हुआ; **अहम्**—मैं; **चैतन्य-वैद्यम्**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु नामक वैद्य की; **आश्रये**—शरण लेता हूँ।

अनुवाद

मैं भौतिक कर्म के कीटों से दंशित और द्वेष के फोड़ों से पीड़ित हूँ। इसलिए दीनता के सागर में गिरकर मैं महान् वैद्य श्री चैतन्य महाप्रभु की शरण ग्रहण करता हूँ।

জয় জয় শচী-সুত শ্রী-কৃষ্ণ-চৈতন্য ।
জয় জয় কৃপা-ময় নিত্যানন্দ ধন্য ॥ ২ ॥

जय जय शची-सुत श्री-कृष्ण-चैतन्य ।
जय जय कृपा-मय नित्यानन्द धन्य ॥ २ ॥

जय जय—जय हो; **शची-सुत**—माता शची के पुत्र की; **श्री-कृष्ण-चैतन्य**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **जय जय**—जय हो; **कृपा-मय**—सबसे दयावान की; **नित्यानन्द धन्य**—महान् श्री नित्यानन्द प्रभु।

अनुवाद

शची माता के पुत्र श्री चैतन्य महाप्रभु की जय हो! श्री नित्यानन्द प्रभु की जय हो! निस्सन्देह, वे सर्वाधिक यशस्वी तथा कृपामय हैं।

জয়াদ্বৈত কৃপা-সিন্ধু জয় ভক্ত-গণ ।
জয় স্বরূপ, গদাধর, রূপ, সনাতন ॥ ৩ ॥

जयाद्वैत कृपा-सिन्धु जय भक्त-गण ।
जय स्वरूप, गदाधर, रूप, सनातन ॥ ३ ॥

जय अद्वैत—अद्वैत प्रभु की जय हो; **कृपा-सिन्धु**—दया के सागर; **जय भक्त-गण**—भक्तों की जय हो; **जय स्वरूप**—स्वरूप दामोदर की जय हो; **गदाधर**—गदाधर पण्डित; **रूप**—रूप गोस्वामी; **सनातन**—सनातन गोस्वामी।

अनुवाद

मैं कृपा के सागर अद्वैत प्रभु को तथा स्वरूप दामोदर गोस्वामी, गदाधर पण्डित, श्री रूप गोस्वामी तथा श्री सनातन गोस्वामी जैसे समस्त भक्तों को सादर नमस्कार करता हूँ।

एक-दिन प्रद्युम्न-मिश्र प्रभुर चरणे ।
दण्डवत्करि' किछु करे निवेदने ॥४॥

एक-दिन प्रद्युम्न-मिश्र प्रभुर चरणे ।
दण्डवत् करि' किछु करे निवेदने ॥४॥

एक-दिन—एक दिन; **प्रद्युम्न-मिश्र**—प्रद्युम्न मिश्र नाम का एक भक्त; **प्रभुर चरणे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में; **दण्डवत् करि'**—प्रणाम करके; **किछु**—कुछ; **करे निवेदने**—निवेदन करने लगा।

अनुवाद

एक दिन प्रद्युम्न मिश्र नाम का एक भक्त श्री चैतन्य महाप्रभु के पास आया और उन्हें दण्डवत् प्रणाम करके अत्यन्त विनीत भाव से कुछ निवेदन करने लगा।

"शुन, प्रभु, मुञि दीन गृहस्थ अधम! ।
कोन भाग्ये पाञाछोँ तोमार दुर्लभ चरण ॥५॥

"शुन, प्रभु, मुञि दीन गृहस्थ अधम! ।
कोन भाग्ये पाञाछों तोमार दुर्लभ चरण ॥५॥

शुन—कृपया सुनिए; **प्रभु**—मेरे प्रभु; **मुञि**—मैं; **दीन**—अत्यन्त पतित; **गृहस्थ**—गृहस्थ; **अधम**—मनुष्यों में नीच; **कोन भाग्ये**—किसी सौभाग्य के कारण; **पाञाछों**—मुझे मिले हैं; **तोमार**—आपके; **दुर्लभ**—अत्यन्त दुर्लभ; **चरण**—चरणकमल।

अनुवाद

उसने कहा, "हे प्रभु, कृपया मेरी बात सुनें। मैं मनुष्यों में सबसे नीच,

कृपण गृहस्थ हूँ, किन्तु अपने सौभाग्य से मैंने किसी तरह आपके दुर्लभ चरणकमलों की शरण प्राप्त की है।

কৃষ্ণ-কথা শুনিবারে মোর ইচ্ছা হয় ।
কৃষ্ণ-কথা কহ মোরে হঞা সদয়'' ॥৬॥
कृष्ण-कथा शुनिबारे मोर इच्छा हय ।
कृष्ण-कथा कह मोरे हञा सदय" ॥६॥

कृष्ण-कथा—भगवान् कृष्ण विषयक कथाएँ; **शुनिबारे**—सुनने की; **मोर**—मेरी; **इच्छा**—इच्छा; **हय**—है; **कृष्ण-कथा**—भगवान् कृष्ण के विषय में कथाएँ; **कह**—कृपया कहिये; **मोरे**—मुझसे; **हञा**—होकर; **स-दय**—कृपालु।

अनुवाद

"मैं निरन्तर कृष्ण विषयक कथाएँ सुनना चाहता हूँ। कृपया मेरे ऊपर दयालु होइए और मुझे कृष्ण के विषय में कुछ बतलाइये।"

প্রভু কহেন,—''কৃষ্ণ-কথা আমি নাহি জানি ।
সবে রামানন্দ জানে, তাঁর মুখে শুনি ॥৭॥
प्रभु कहेन,—"कृष्ण-कथा आमि नाहि जानि ।
सबे रामानन्द जाने, ताँर मुखे शुनि ॥७॥

प्रभु कहेन—महाप्रभु ने उत्तर दिया; **कृष्ण-कथा**—भगवान् कृष्ण विषयक कथाएँ; **आमि**—मैं; **नाहि जानि**—नहीं जानता; **सबे**—केवल; **रामानन्द जाने**—रामानन्द राय जानते हैं; **ताँर मुखे**—उनके मुख से; **शुनि**—मैं सुनता हूँ।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "मैं कृष्ण विषयक कथाएँ नहीं जानता। मेरे विचार से एकमात्र रामानन्द राय उन्हें जानते हैं, क्योंकि मैं उन्हीं से ये कथाएँ सुनता हूँ।

ভাগ্যে তোমার কৃষ্ণ-কথা শুনিতে হয় মন ।
রামানন্দ-পাশ যাই' করহ শ্রবণ ॥৮॥

भाग्ये तोमार कृष्ण-कथा शुनिते हय मन ।
रामानन्द-पाश याइ' करह श्रवण ॥ ८ ॥

भाग्ये—सौभाग्य से; **तोमार**—तुम्हारा; **कृष्ण-कथा**—भगवान् कृष्ण विषयक कथाएँ; **शुनिते**—सुनने के लिए; **हय मन**—रुचि हुई है; **रामानन्द-पाश**—रामानन्द राय के पास; **याइ'**—जाकर; **करह श्रवण**—सुनो।

अनुवाद

"यह तो तुम्हारा सौभाग्य है कि कृष्ण विषयक कथाएँ सुनने के लिए तुम्हारी रुचि हुई है। तुम्हारे लिए सब से अच्छा यही होगा कि तुम रामानन्द राय के पास जाओ और उनसे इन कथाओं के विषय में सुनो।

কৃষ্ণ-কথায় রুচি তোমার——বড় ভাগ্যবান্ ।
যার কৃষ্ণ-কথায় রুচি, সেই ভাগ্যবান্ ॥ ৯ ॥

কৃষ্ণ-কথায় রুচি তোমার——বড় ভাগ্যবান্ ।
যার কৃষ্ণ-কথায় রুচি, সেই ভাগ্যবান্ ॥ ৯ ॥

কৃষ্ণ-কথায়—কৃষ্ণ की कथाओं में; **রুচি**—रस; **তোমার**—तुम्हारा; **বড় ভাগ্যবান্**—अत्यन्त भाग्यशाली; **যার**—जिसका; **কৃষ্ণ-কথায়**—कृष्ण के बारे में सुनने में; **রুচি**—रस है; **সেই ভাগ্যবান্**—वह अत्यन्त भाग्यशाली है।

अनुवाद

"मैं देख रहा हूँ कि तुममें कृष्ण विषयक कथा सुनने के प्रति रुचि उत्पन्न हुई है। इसलिए तुम अत्यन्त भाग्यशाली हो। न केवल तुमने, अपितु जिस किसी ने ऐसी रुचि उत्पन्न कर ली है, वही परम भाग्यशाली माना जाता है।

ধর্মঃ স্বনুষ্ঠিতঃ পুংসাং বিষ্বক্সেন-কথাসু যঃ ।
নোত্পাদয়েদ্ যদি রতিং শ্রম এব হি কেবলম্ ॥ ১০ ॥

धर्मः स्वनुष्ठितः पुंसां विष्वक्सेन-कथासु यः ।
नोत्पादयेद् यदि रतिं श्रम एव हि केवलम् ॥ १० ॥

धर्मः—वर्ण तथा आश्रम के विधानों का पालन; **सु-अनुष्ठितः**—उचित प्रकार से आचरित; **पुंसाम्**—लोगों के; **विष्वक्सेन-कथासु**—विष्वक्सेन अथवा कृष्ण की कथाओं में;

यः—जो; **न**—नहीं; **उत्पादयेत्**—उत्पन्न करते; **यदि**—यदि; **रतिम्**—रुचि; **श्रमः**—परिश्रम; **एव**—निःसन्देह; **हि**—अवश्य; **केवलम्**—केवल।

अनुवाद

"'जो व्यक्ति वर्णाश्रम प्रणाली के अनुसार विधि-विधानों को उचित रीति से सम्पन्न करता है, किन्तु कृष्ण के प्रति सुप्त अनुराग को विकसित नहीं करता अथवा कृष्ण के विषय में सुनने तथा कीर्तन करने के प्रति रुचि उत्पन्न नहीं करता, वह व्यर्थ ही श्रम करता है।'"

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१.२.८) से उद्धृत है।

তবে প্রদ্যুম্ন-মিশ্র গেলা রামানন্দের স্থানে ।
রায়ের সেবক তাঁরে বসাইল আসনে ॥ ১১ ॥

তবে প্রদ্যুম্ন-মিশ্র গেলা রামানন্দের স্থানে ।
রায়ের সেবক তাঁরে বসাইল আসনে ॥ ১১ ॥

তবে—उसके बाद; **প্রদ্যুম্ন-মিশ্র**—प्रद्युम्न मिश्र; **গেলা**—गया; **রামানন্দের স্থানে**—रामानन्द राय के स्थान पर; **রায়ের সেবক**—रामानन्द राय के सेवक ने; **তাঁরে**—उसे; **বসাইল আসনে**—बैठने का आसन दिया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के द्वारा इस प्रकार मन्त्रणा दिये जाने पर प्रद्युम्न मिश्र रामानन्द राय के घर गया। वहाँ उनके नौकर ने उसे बैठने के लिए समुचित आसन दिया।

দর্শন না পাঞা মিশ্র সেবকে পুছিল ।
রায়ের বৃত্তান্ত সেবক কহিতে লাগিল ॥ ১২ ॥

দর্শন না পাঞা মিশ্র সেবকে পুছিল ।
রায়ের বৃত্তান্ত সেবক কহিতে লাগিল ॥ ১২ ॥

দর্শন—दर्शन; **না**—नहीं; **পাঞা**—पाकर; **মিশ্র**—प्रद्युम्न मिश्र; **সেবকে**—सेवक से; **পুছিল**—पूछा; **রায়ের**—रामानन्द राय के; **বৃত্তান্ত**—कार्यकलाप; **সেবক**—नौकर; **কহিতে লাগিল**—बताने लगा।

अनुवाद

रामानन्द राय का तुरन्त दर्शन न पाकर प्रद्युम्न मिश्र ने नौकर से पूछताछ की, जिसने श्री रामानन्द राय की कार्य-व्यस्तता के सम्बन्ध में बताया।

"दुई देव-कन्या हय परम-सुन्दरी ।
नृत्य-गीते सुनिपुणा, वयसे किशोरी ॥ १३॥

"दुइ देव-कन्या हय परम-सुन्दरी ।
नृत्य-गीते सुनिपुणा, वयसे किशोरी ॥ १३॥

दुइ—दो; **देव-कन्या**—नृत्य करनेवाली कन्याएँ; **हय**—हैं; **परम-सुन्दरी**—अत्यन्त सुन्दर; **नृत्य-गीते**—नाचने और गाने में; **सु-निपुणा**—अत्यन्त निपुण; **वयसे**—आयु में; **किशोरी**—अत्यन्त युवती।

अनुवाद

"दो नर्तकी कन्याएँ हैं, जो अतीव सुन्दर हैं। वे अत्यन्त तरुणावस्था में हैं और नाचने-गाने में अति दक्ष हैं।

सेइ दुँहे लञा राय निभृत उद्याने ।
निज-नाटक-गीतेर शिखाय नर्तने ॥ १४॥

सेइ दुँहे लञा राय निभृत उद्याने ।
निज-नाटक-गीतेर शिखाय नर्तने ॥ १४॥

सेइ दुँहे—उन दोनों को; **लञा**—लेकर; **राय**—रामानन्द राय; **निभृत उद्याने**—एक बगीचे में एकान्त स्थान में; **निज-नाटक**—स्व-लिखित नाटक के; **गीतेर**—गीतों पर; **शिखाय**—निर्देश देते हैं; **नर्तने**—नृत्य में।

अनुवाद

" श्रील रामानन्द राय इन दोनों कन्याओं को अपने उद्यान के एकान्त स्थान में ले गये हैं, जहाँ वे स्वरचित नाटक के लिए लिखे गये गीतों के अनुसार उन्हें नृत्य का प्रशिक्षण दे रहे हैं तथा निर्देशन कर रहे हैं।

तात्पर्य

जिस नाटक का अभ्यास रामानन्द राय तथा दो तरुणियाँ कर रही थीं, वह

सुविख्यात *जगन्नाथ वल्लभ नाटक* था। ये गीत तथा नृत्य भगवान् जगन्नाथ की प्रसन्नता के लिए थे, अतएव रामानन्द राय स्वयं ही प्रशिक्षण दे रहे थे कि नाटक के लिए कैसे नाचा-गाया जाए।

तुमि इहाँ बसि' रह, क्षणेके आसिबेन ।
तबे येई आज्ञा देह, सेई करिबेन'' ॥ १५ ॥

तुमि इहाँ बसि' रह, क्षणेके आसिबेन ।
तबे येइ आज्ञा देह, सेइ करिबेन" ॥ १५ ॥

तुमि—आप; **इहाँ**—यहाँ; **बसि'**—बैठकर; **रह**—प्रतीक्षा कीजिए; **क्षणेके आसिबेन**—वह किसी भी क्षण आ जायेंगे; **तबे**—तब; **येइ**—जो कुछ; **आज्ञा**—आदेश; **देह**—आप देंगे; **सेइ**—वह; **करिबेन**—करेंगे।

अनुवाद

"कृपया यहाँ बैठ जायें और कुछ क्षणों तक प्रतीक्षा करें। उनके आते ही आप जो आदेश देंगे वे करेंगे।"

तबे प्रद्युम्न-मिश्र ताहाँ रहिल बसिया ।
रामानन्द निभृते सेई दुई-जन लञा ॥ १६ ॥

तबे प्रद्युम्न-मिश्र ताहाँ रहिल बसिया ।
रामानन्द निभृते सेइ दुइ-जन लञा ॥ १६ ॥

तबे—तब; **प्रद्युम्न-मिश्र**—प्रद्युम्न मिश्र; **ताहाँ**—वहाँ; **रहिल बसिया**—बैठे रहे; **रामानन्द**—रामानन्द राय; **निभृते**—एक एकान्त स्थान में; **सेइ**—वे; **दुइ-जन**—दोनों कन्याओं को; **लञा**—लेकर।

अनुवाद

जब प्रद्युम्न मिश्र वहाँ बैठा हुआ था, तब रामानन्द राय दो कन्याओं को एकान्त स्थान में ले गये।

स्व-हस्ते करेन तार अभ्यङ्ग-मर्दन ।
स्व-हस्ते करान स्नान, गात्र सम्मार्जन ॥ १७ ॥

स्व-हस्ते करेन तार अभ्यङ्ग-मर्दन ।
स्व-हस्ते करान स्नान, गात्र सम्मार्जन ॥ १७॥

स्व-हस्ते—अपने हाथों से; **करेन**—करते हैं; **तार**—उन दोनों कन्याओं के; **अभ्यङ्ग-मर्दन**—शरीर की तेल से मालिश; **स्व-हस्ते**—अपने हाथों से; **करान स्नान**—स्नान करवाते हैं; **गात्र सम्मार्जन**—सम्पूर्ण शरीर का मार्जन।

अनुवाद

श्री रामानन्द राय ने अपने हाथों से उनके शरीर में तेल से मालिश की और जल से स्नान कराया। निस्सन्देह, रामानन्द राय ने अपने हाथों से उनके सारे शरीर को साफ किया।

স্ব-হস্তে পরান বস্ত্র, সর্বাঙ্গ মণ্ডন ।
তবু নির্বিকার রায়-রামানন্দের মন ॥১৮॥

स्व-हस्ते परान वस्त्र, सर्वाङ्ग मण्डन ।
तबु निर्विकार राय-रामानन्देर मन ॥ १८॥

स्व-हस्ते—अपने हाथों से; **परान वस्त्र**—उन्हें वस्त्र पहनाते हैं; **सर्वाङ्ग मण्डन**—सम्पूर्ण शरीर को सजाना; **तबु**—फिर भी; **निर्विकार**—अविचलित; **राय-रामानन्देर**—रामानन्द राय के; **मन**—मनोभाव।

अनुवाद

यद्यपि उन्होंने दोनों तरुणियों को वस्त्र पहनाए तथा उनके शरीरों को अपने हाथ से सजाया, किन्तु वे निर्विकार रहे। ऐसा है श्री रामानन्द राय का मन।

কাষ্ঠ-পাষাণ-স্পর্শে হয় যৈছে ভাব ।
তরুণী-স্পর্শে রামানন্দের তৈছে 'স্বভাব' ॥১৯॥

काष्ठ-पाषाण-स्पर्शे हय ग्रैछे भाव ।
तरुणी-स्पर्शे रामानन्देर तैछे 'स्वभाव' ॥ १९॥

काष्ठ—लकड़ी; **पाषाण**—पत्थर; **स्पर्शे**—स्पर्श द्वारा; **हय**—होती है; **ग्रैछे**—जैसी; **भाव**—मानसिक स्थिति; **तरुणी-स्पर्शे**—युवती कन्याओं के स्पर्श द्वारा; **रामानन्देर**—रामानन्द राय का; **तैछे**—वैसा ही; **स्वभाव**—स्वभाव रहा।

अनुवाद

उन तरुणियों का स्पर्श करते समय वे काठ या पत्थर का स्पर्श करने वाले व्यक्ति के समान थे, क्योंकि उनका शरीर तथा मन दोनों अप्रभावित थे।

सेव्य-बुद्धि आरोपिया करेन सेवन ।
स्वाभाविक दासी-भाव करेन आरोपण ॥२०॥

सेव्य-बुद्धि आरोपिया करेन सेवन ।
स्वाभाविक दासी-भाव करेन आरोपण ॥ २० ॥

सेव्य-बुद्धि आरोपिया—पूजनीय मानकर; **करेन सेवन**—सेवा में नियोजित करते हैं; **स्वाभाविक**—अपनी स्वाभाविक स्थिति द्वारा; **दासी-भाव**—एक दासी के रूप में; **करेन आरोपण**—मानते हैं।

अनुवाद

श्रील रामानन्द राय ऐसा इसलिए करते थे, क्योंकि वे अपने आपको अपनी स्वाभाविक स्थिति में गोपियों की दासी के रूप में मानते थे। इस तरह यद्यपि वे बाहर से पुरुष प्रतीत होते थे, किन्तु अन्तःकरण से अपनी मूल आध्यात्मिक स्थिति में वे अपने आपको दासी रूप में और दोनों कन्याओं को गोपियाँ मानते थे।

तात्पर्य

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर अपने *अमृत-प्रवाह-भाष्य* में लिखते हैं, "श्रील रामानन्द राय ने *जगन्नाथ वल्लभ नाटक* की रचना की और इस नाटक के भावों के प्रदर्शनार्थ उन्होंने दो पेशेवर नर्तकियाँ तथा गायिकाएँ लगा रखी थीं। ऐसी लड़कियाँ जो *देवदासी* कहलाती हैं, आज भी जगन्नाथ मन्दिर में लगाई जाती हैं, जहाँ वे *माहारी* कहलाती हैं। श्री रामानन्द राय ने ऐसी दो कन्याएँ लगा रखी थीं और चूँकि उन्हें गोपियों का अभिनय करना था, अतएव वे उन्हें इसकी शिक्षा देते थे कि किस तरह गोपियों के विचार जागृत किये जाँय। चूँकि गोपियाँ पूज्य हैं, अतएव रामानन्द राय, जो कि उन कन्याओं को गोपियाँ तथा स्वयं को उनकी दासी मानते थे, स्वयं ही उनके शरीर को पूरी तरह स्वच्छ रखने के

लिए तेल की मालिश करते थे। चूँकि रामानन्द राय सदैव गोपियों की दासी का पद स्वीकार करते थे, अतएव इन कन्याओं के साथ उनका पूर्वाभ्यास वास्तव में आध्यात्मिक स्तर पर होता था।"

चूँकि रामानन्द राय द्वारा उन कन्याओं की सेवा करते समय निजी इन्द्रियतृप्ति का कोई प्रश्न नहीं था, अतएव उनका मन स्थिर था तथा उनका शरीर निर्विकार था। इसकी न तो किसी को नकल करनी चाहिए, न ही रामानन्द राय के अतिरिक्त किसी में ऐसी मनोवृत्ति सम्भव है, जैसाकि आगे श्री चैतन्य महाप्रभु बतलाएंगे। रामानन्द राय का दृष्टान्त सचमुच ही अनोखा है। *श्रीचैतन्य-चरितामृत* के रचियता ने यह वर्णन इसलिए दिया है, क्योंकि पूर्ण भक्ति में ऐसी स्थिति प्राप्त की जा सकती है। तो भी, इस विषय को गम्भीरता से समझे जाने की आवश्यकता है और कभी भी ऐसे कार्यों की नकल करने का प्रयास नहीं करना चाहिए।

महाप्रभुर भक्त-गणेर दुर्गम महिमा ।
ताहे रामानन्देर भाव-भक्ति-प्रेम-सीमा ॥ २१ ॥

महाप्रभुर—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु के; **भक्त-गणेर**—भक्तों की; **दुर्गम**—समझना कठिन है; **महिमा**—महानता; **ताहे**—उस सम्बन्ध में; **रामानन्देर**—श्री रामानन्द राय की; **भाव-भक्ति**—प्रेम भक्ति के; **प्रेम-सीमा**—कृष्ण-प्रेम की सीमा।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्तों की महानता को समझ पाना अत्यधिक कठिन है। इन सबमें श्री रामानन्द राय अनोखे हैं, क्योंकि उन्होंने यह दिखला दिया कि कोई अपने प्रेमावेश (भाव-प्रेम) को किस तरह चरम सीमा (पराकाष्ठा) तक पहुँचा सकता है।

তবে সেই দুই-জনে নৃত্য শিখাইলা ।
গীতের গূঢ় অর্থ অভিনয় করাইলা ॥২২॥

तबे सेइ दुइ-जने नृत्य शिखाइला ।
गीतेर गूढ़ अर्थ अभिनय कराइला ॥ २२ ॥

तबे—उसके बाद; **सेइ**—वे; **दुइ-जने**—उन दोनों युवा कन्याओं को; **नृत्य शिखाइला**—नृत्य करना सिखाया; **गीतेर**—गीतों का; **गूढ़ अर्थ**—गहरा अर्थ; **अभिनय कराइला**—अभिनय द्वारा प्रदर्शित करना सिखाया।

अनुवाद

रामानन्द राय ने दोनों लड़कियों को नाचने तथा नाटकीय अभिनयों द्वारा उनके गीतों के गूढ़ अर्थ को व्यक्त करने का निर्देशन दिया।

সঞ্চারী, সাত্ত্বিক, স্থায়ি-ভাবের লক্ষণ ।
মুখে নেত্রে অভিনয় করে প্রকটন ॥ ২৩ ॥

सञ्चारी, सात्त्विक, स्थायि-भावेर लक्षण ।
मुखे नेत्रे अभिनय करे प्रकटन ॥ २३ ॥

सञ्चारी—कुछ समय तक प्रकट होने वाले; **सात्त्विक**—स्वाभाविक; **स्थायि**—निरन्तर रहने वाले; **भावेर**—भावों के; **लक्षण**—लक्षण; **मुखे**—चेहरे के हावभावों में; **नेत्रे**—आँखो की गति में; **अभिनय**—नाटकीय, अभिनय; **करे प्रकटन**—करके दिखाया।

अनुवाद

उन्होंने उन दोनों को संचारी, सात्त्विक तथा स्थायी भावों के लक्षणों को मुख, नेत्र तथा शरीर के अन्य भागों की गतियों द्वारा व्यक्त करना सिखाया।

ভাব-প্রকটন-লাস্য রায় যে শিখায় ।
জগন্নাথের আগে দুঁহে প্রকট দেখায় ॥ ২৪ ॥

भाव-प्रकटन-लास्य राय ये शिखाय ।
जगन्नाथेर आगे दुँहे प्रकट देखाय ॥ २४ ॥

भाव—भाव; **प्रकटन**—प्रकट करना; **लास्य**—स्त्री सुलभ मुद्राएँ और नृत्य; **राय**—रामानन्द राय; **ये**—जो; **शिखाय**—सिखा रहे थे; **जगन्नाथेर आगे**—भगवान् जगन्नाथ के समक्ष; **दुँहे**—उन दोनों ने; **प्रकट देखाय**—प्रदर्शित किये।

अनुवाद

स्त्री सुलभ नृत्य भंगिमाओं के माध्यम से रामानन्द राय द्वारा प्रशिक्षित दोनों तरुणियों ने इन भावाभिव्यक्तियों को भगवान् जगन्नाथ के समक्ष हूबहू प्रदर्शित किया।

तबे सेइ दुई-जने प्रसाद खाओयाइला ।
निभृते दुँहारे निज-घरे पाठाइला ॥ २५ ॥

तबे सेइ दुइ-जने प्रसाद खाओयाइला ।
निभृते दुँहारे निज-घरे पाठाइला ॥ २५ ॥

तबे—फिर; **सेइ**—उन दोनों को; **दुइ-जने**—दोनों कन्याओं को; **प्रसाद खाओयाइला**—प्रसाद खिलाया; **निभृते**—गुप्त रूप से; **दुँहारे**—उन दोनों को; **निज-घरे**—उनके घर; **पाठाइला**—भेज दिया।

अनुवाद

तब रामानन्द राय ने दोनों तरुणियों को प्रचुर प्रसाद खिलाया और किसी को प्रकट किये बिना उन दोनों को उनके घर भेज दिया।

प्रति-दिन राय ऐछे कराय साधन ।
कोन्जाने क्षुद्र जीव काँहा ताँर मन? ॥ २६ ॥

प्रति-दिन राय ऐछे कराय साधन ।
कोन् जाने क्षुद्र जीव काँहा ताँर मन? ॥ २६ ॥

प्रति-दिन—रोज; **राय**—रामानन्द राय; **ऐछे**—इस प्रकार; **कराय साधन**—नियमित रूप से प्रशिक्षण देते; **कोन् जाने**—कौन जान सकता है; **क्षुद्र जीव**—एक तुच्छ जीव; **काँहा**—कहाँ; **ताँर**—उनका; **मन**—मनोभाव।

अनुवाद

प्रतिदिन वे उन दोनों देवदासियों को नृत्य सिखाते। जिन क्षुद्र जीवों के मन सदैव भौतिक इन्द्रियतृप्ति में लीन रहते हों, भला उनमें से ऐसा कौन होगा, जो श्री रामानन्द राय के मनोभाव को समझ सकता था?

तात्पर्य

कृष्ण की तुष्टि के लिए रामानन्द राय द्वारा गोपियों की सेवा पूर्णतया

आध्यात्मिक जगत् का व्यवहार है। आध्यात्मिक परिवेश में पूर्णरूपेण रहे बिना रामानन्द राय के कार्यों को समझ पाना अत्यन्त कठिन है।

মিশ্রের আগমন রায়ে সেবক কহিলা ।
শীঘ্র রামানন্দ তবে সভাতে আইলা ॥২৭॥

मिश्रेर आगमन राये सेवक कहिला ।
शीघ्र रामानन्द तबे सभाते आइला ॥ २७॥

मिश्रेर—प्रद्युम्न मिश्र का; **आगमन**—आगमन; **राये**—रामानन्द राय को; **सेवक कहिला**—सेवक ने बताया; **शीघ्र**—अति शीघ्र; **रामानन्द**—रामानन्द राय; **तबे**—उसके बाद; **सभाते आइला**—सभाकक्ष में गये।

अनुवाद

जब नौकर ने रामानन्द राय को प्रद्युम्न मिश्र के आगमन की सूचना दी, तो वे तुरन्त ही सभाकक्ष गये।

মিশ্রেরে নমস্কার করে সম্মান করিয়া ।
নিবেদন করে কিছু বিনীত হঞা ॥২৮॥

मिश्रेरे नमस्कार करे सम्मान करिया ।
निवेदन करे किछु विनीत हञा ॥ २८॥

मिश्रेरे—प्रद्युम्न मिश्र को; **नमस्कार करे**—प्रणाम करके; **सम्मान करिया**—आदरपूर्वक; **निवेदन करे**—निवेदन किया; **किछु**—कुछ; **विनीत हञा**—अत्यन्त विनम्रतापूर्वक।

अनुवाद

उन्होंने प्रद्युम्न मिश्र को सादर नमस्कार किया और तब अत्यन्त विनीत होकर इस प्रकार कहा।

"বহু-ক্ষণ আইলা, মোরে কেহ না কহিল ।
তোমার চরণে মোর অপরাধ হইল ॥২৯॥

"बहु-क्षण आइला, मोरे केह ना कहिल ।
तोमार चरणे मोर अपराध हइल ॥ २९॥

बहु-क्षण—बहुत पहले से; **आइला**—आप आये; **मोरे**—मुझे; **केह ना कहिल**—किसी ने सूचना नहीं दी; **तोमार चरणे**—आपके चरणकमलों में; **मोर**—मेरा; **अपराध**—अपराध; **हइल**—हो गया।

अनुवाद

"हे महोदय, आप काफी समय पहले यहाँ आये, किन्तु किसी ने मुझे सूचित नहीं किया। इसलिए मैं निश्चित रूप से आपके चरणकमलों पर अपराधी हूँ।

তোমার আগমনে মোর পবিত্র হৈল ঘর ।
আজ্ঞা কর, ক্যা করোঁ তোমার কিঙ্কর'' ॥ ৩০ ॥

तोमार आगमने मोर पवित्र हैल घर ।
आज्ञा कर, क्या करों तोमार किङ्कर" ॥ ३० ॥

तोमार आगमने—आपके आगमन के कारण; **मोर**—मेरा; **पवित्र**—पवित्र; **हैल**—हो गया; **घर**—घर; **आज्ञा कर**—कृपया आदेश दीजिए; **क्या करों**—मैं क्या कर सकता हूँ; **तोमार किङ्कर**—मैं आपका सेवक हूँ।

अनुवाद

"आपके आने से मेरा सम्पूर्ण घर पवित्र हो गया है। कृपया मुझे आदेश दें। मैं आपके लिए क्या कर सकता हूँ? मैं आपका सेवक हूँ।"

মিশ্র কহে,—''তোমা দেখিতে হৈল আগমনে ।
আপনা পবিত্র কৈলুঁ তোমার দরশনে'' ॥ ৩১ ॥

मिश्र कहे,—"तोमा देखिते हैल आगमने ।
आपना पवित्र कैलुँ तोमार दरशने" ॥ ३१ ॥

मिश्र कहे—प्रद्युम्न मिश्र ने उत्तर दिया; **तोमा**—आपको; **देखिते**—मिलने के लिए; **हैल आगमने**—मैं आया था; **आपना**—मैं स्वयं; **पवित्र कैलुँ**—पवित्र हो गया हूँ; **तोमार दरशने**—आपके दर्शन द्वारा।

अनुवाद

प्रद्युम्न मिश्र ने उत्तर दिया, "मैं तो केवल आपका दर्शन करने आया था। अब मैंने आपका दर्शन करके अपने आपको पवित्र कर लिया है।"

অতিকাল দেখি' মিশ্র কিছু না কহিল ।
বিদায় হইয়া মিশ্র নিজ-ঘর গেল ॥৩২॥

अतिकाल देखि' मिश्र किछु ना कहिल ।
विदाय हइया मिश्र निज-घर गेल ॥ ३२॥

अतिकाल देखि'—देर होते देख; **मिश्र**—प्रद्युम्न मिश्र; **किछु**—कुछ; **ना कहिल**—नहीं बोले; **विदाय हइया**—विदा होकर; **मिश्र**—प्रद्युम्न मिश्र; **निज-घर**—अपने घर; **गेल**—लौट गये।

अनुवाद

यह देखकर कि काफी देर हो चुकी है, उसने रामानन्द राय से कुछ भी नहीं कहा। प्रत्युत उसने विदा ली और अपने घर लौट गया।

আর দিন মিশ্র আইল প্রভু-বিদ্যমানে ।
প্রভু কহে,—'কৃষ্ণ-কথা শুনিলা রায়-স্থানে'? ॥৩৩॥

आर दिन मिश्र आइल प्रभु-विद्यमाने ।
प्रभु कहे,—'कृष्ण-कथा शुनिला राय-स्थाने'? ॥ ३३॥

आर दिन—अगले दिन; **मिश्र**—प्रद्युम्न मिश्र; **आइल**—आया; **प्रभु-विद्यमाने**—श्री चैतन्य महाप्रभु की उपस्थिति में; **प्रभु कहे**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने पूछा; **कृष्ण-कथा**—कृष्ण की चर्चा; **शुनिला**—क्या तुमने सुनीं; **राय-स्थाने**—श्री रामानन्द राय से।

अनुवाद

अगले दिन जब प्रद्युम्न मिश्र श्री चैतन्य महाप्रभु की उपस्थिति में आया, तो महाप्रभु ने पूछा, "क्या तुमने श्री रामानन्द राय से कृष्ण के विषय में कथाएँ सुनीं?"

তবে মিশ্র রামানন্দের বৃত্তান্ত কহিলা ।
শুনি' মহাপ্রভু তবে কহিতে লাগিলা ॥৩৪॥

तबे मिश्र रामानन्देर वृत्तान्त कहिला ।
शुनि' महाप्रभु तबे कहिते लागिला ॥ ३४॥

तबे—उसके बाद; **मिश्र**—प्रद्युम्न मिश्र; **रामानन्देर**—श्री रामानन्द राय के; **वृत्तान्त**

कहिला—कार्यकलापों का वर्णन किया; **शुनि'**—सुनकर; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **तबे**—तब; **कहिते लागिला**—कहने लगे।

अनुवाद

तब प्रद्युम्न मिश्र ने श्री रामानन्द राय के कार्यकलापों का वर्णन किया। इन्हें सुनने के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु बोलने लगे।

''आमि त' सन्न्यासी, आपनारे विरक्त करि' मानि ।
दर्शन रहु दूरे, 'प्रकृतির' নাম যদি শুনি ॥৩৫॥
তবহিঁ বিকার পায় মোর তনু-মন ।
প্রকৃতি-দর্শনে স্থির হয় কোন্জন?'' ॥৩৬॥

"आमि त' सन्न्यासी, आपनारे विरक्त करि' मानि ।
दर्शन रहु दूरे, 'प्रकृतिर' नाम यदि शुनि ॥ ३५ ॥
तबहिं विकार पाय मोर तनु-मन ।
प्रकृति-दर्शने स्थिर हय कोन् जन?" ॥ ३६ ॥

आमि—मैं; **त'**—तो; **सन्न्यासी**—एक संन्यासी; **आपनारे**—स्वयं को; **विरक्त करि'**—सर्वस्व त्याग दिया; **मानि**—मैं मानता हूँ; **दर्शन रहु दूरे**—देखना तो दूर की बात; **प्रकृतिर**—स्त्री का; **नाम**—नाम; **यदि**—यदि; **शुनि**—मैं सुनता हूँ; **तबहिं**—तुरन्त; **विकार**—विकार; **पाय**—प्राप्त करता है; **मोर**—मेरा; **तनु-मन**—मन और शरीर; **प्रकृति-दर्शने**—एक स्त्री को देखकर; **स्थिर**—धीर; **हय**—हो; **कोन् जन**—कौन व्यक्ति।

अनुवाद

उन्होंने कहा, "मैं एक संन्यासी हूँ और मैं निश्चित रूप से अपने आपको विरक्त मानता हूँ। किन्तु स्त्री को देखने की बात तो दूर रही, यदि मैं स्त्री का नाम भी सुनता हूँ, तो मैं अपने तन तथा मन में विकार का अनुभव करता हूँ। इसलिए स्त्री के दर्शन से कौन अविचलित रह सकता है? यह बहुत कठिन है।

রামানন্দ রায়ের কথা শুন, সর্ব-জন ।
কহিবার কথা নহে, যাহা আশ্চর্য-কথন ॥৩৭॥

রামানন্দ রায়ের কথা শুন, সর্ব-জন ।
কহিবার কথা নহে, যাহা আশ্চর্য-কথন ॥ ৩৭ ॥

रामानन्द रायेर—श्री रामानन्द राय के; **कथा**—विषय; **शुन**—कृपया सुनो; **सर्व-जन**—सभी लोग; **कहिबार**—कहने की; **कथा**—बातें; **नहे**—वे नहीं हैं; **ग्राहा**—जो; **आश्चर्य्य-कथन**—आश्चर्यजनक और अद्भुत बातें।

अनुवाद

"सभी लोग कृपया रामानन्द राय के विषय में इन बातों को सुनो; यद्यपि वे इतनी अद्भुत तथा असामान्य हैं कि उन्हें कहा नहीं जाना चाहिए।

एके देव-दासी, आर सुन्दरी तरुणी ।
तार सब अङ्ग-सेवा करेन आपनि ॥ ३८ ॥

एके देव-दासी, आर सुन्दरी तरुणी ।
तार सब अङ्ग-सेवा करेन आपनि ॥ ३८ ॥

एके—एक ओर; **देव-दासी**—नर्तकी कन्याएँ; **आर**—और; **सुन्दरी तरुणी**—अत्यन्त सुन्दरी तथा युवतियाँ; **तार**—उनके; **सब**—सभी; **अङ्ग**—अंगों की; **सेवा**—सेवा; **करेन आपनि**—स्वयं करते हैं।

अनुवाद

"दोनों पेशेवर नर्तकियाँ सुन्दरी तथा तरुणियाँ हैं, फिर भी श्री रामानन्द राय उनके शरीरों में अपने हाथ से तेल की मालिश करते हैं।

स्नानादि कराय, पराय वास-विभूषण ।
गुह्य अङ्गेर हय ताहा दर्शन-स्पर्शन ॥ ३९ ॥

स्नानादि कराय, पराय वास-विभूषण ।
गुह्य अङ्गेर हय ताहा दर्शन-स्पर्शन ॥ ३९ ॥

स्नान-आदि कराय—वे उन्हें स्नानादि करवाते हैं; **पराय वास-विभूषण**—वस्त्र पहनाते हैं तथा उनके शरीर को अनेक प्रकार के आभूषणों से सजाते हैं; **गुह्य अङ्गेर**—शरीर के गुप्त अंगों का; **हय**—होता है; **ताहा**—वह; **दर्शन-स्पर्शन**—देखना और स्पर्श।

अनुवाद

"वे स्वयं ही उन्हें नहलाते हैं और आभूषणों से विभूषित करते हैं। इस तरह वे स्वाभाविक रूप से उनके शरीरों के गुप्तांगों को देखते तथा छूते हैं।

তবু নির্বিকার রায়-রামানন্দের মন ।
নানা-ভাবোদগার তারে করায় শিক্ষণ ॥ ৪০ ॥

তবু নির্বিকার রায়-রামানন্দের মন ।
নানা-ভাবোদ্‌গার তারে করায় শিক্ষণ ॥ ৪০ ॥

তবু—फिर भी; **নির্বিকার**—अविचलित; **রায়-রামানন্দের মন**—श्री रामानन्द राय का मन; **নানা-ভাব-উদ্‌গার**—भक्ति भाव के सभी लक्षण और परिवर्तन; **তারে**—उनको; **করায় শিক্ষণ**—वे सिखाते हैं।

अनुवाद

"तो भी, रामानन्द राय के मन में कभी विकार नहीं आता, यद्यपि वे उन कन्याओं को यह सिखाते हैं कि भाव के सारे लक्षणों को शरीर द्वारा किस तरह व्यक्त किया जाए।

নির্বিকার দেহ-মন——কাষ্ঠ-পাষাণ-সম! ।
আশ্চর্য,——তরুণী-স্পর্শে নির্বিকার মন ॥ ৪১ ॥

নির্বিকার দেহ-মন——কাষ্ঠ-পাষাণ-সম! ।
আশ্চর্য্য,——তরুণী-স্পর্শে নির্বিকার মন ॥ ৪১ ॥

নির্বিকার—निर्विकार; **দেহ-মন**—शरीर तथा मन; **কাষ্ঠ-পাষাণ-সম**—लकड़ी और पत्थर के समान; **আশ্চর্য্য**—आश्चर्यजनक; **তরুণী-স্পর্শে**—युवा कन्याओं को स्पर्श करने पर; **নির্বিকার**—अविकृत; **মন**—मन।

अनुवाद

"उनका मन काठ या पत्थर की तरह स्थिर है। निस्सन्देह, यह आश्चर्यजनक है कि जब वे ऐसी तरुणियों का स्पर्श करते हैं, तो भी उनका मन कभी चलायमान नहीं होता।

এক রামানন্দের হয় এই অধিকার ।
তাতে জানি অপ্রাকৃত-দেহ তাঁহার ॥ ৪২ ॥

এক রামানন্দের হয় এই অধিকার ।
তাতে জানি অপ্রাকৃত-দেহ তাঁহার ॥ ৪২ ॥

एक—केवल एक; **रामानन्देर**—श्री रामानन्द राय का; **हय**—है; **एइ**—यह; **अधिकार**—विशेष अधिकार; **ताते**—उस प्रकार; **जानि**—हम समझ सकते हैं; **अप्राकृत**—आध्यात्मिक; **देह**—देह; **ताँहार**—उनकी।

अनुवाद

"ऐसे कार्यों पर एकमात्र रामानन्द राय का जन्मसिद्ध अधिकार है, क्योंकि मैं समझ सकता हूँ कि उनका शरीर भौतिक नहीं, अपितु पूरी तरह आध्यात्मिक हो चुका है।

তাঁহার মনের ভাব তেঁহ জানে মাত্র ।
তাহা জানিবারে আর দ্বিতীয় নাহি পাত্র ॥ ৪৩ ॥

ताँहार मनेर भाव तेंह जाने मात्र ।
ताहा जानिबारे आर द्वितीय नाहि पात्र ॥ ४३ ॥

ताँहार—उनके; **मनेर**—मन की; **भाव**—स्थिति; **तेंह**—वे; **जाने**—जानते हैं; **मात्र**—केवल; **ताहा जानिबारे**—उसे समझने के लिए; **आर**—अन्य; **द्वितीय**—दूसरा; **नाहि**—नहीं है; **पात्र**—योग्य व्यक्ति।

अनुवाद

"एकमात्र वे ही अपने मन की स्थिति को समझ सकते हैं, अन्य कोई नहीं।

কিন্তু শাস্ত্র-দৃষ্ট্যে এক করি অনুমান ।
শ্রী-ভাগবত-শাস্ত্র—তাহাতে প্রমাণ ॥ ৪৪ ॥

किन्तु शास्त्र-दृष्ट्ये एक करि अनुमान ।
श्री-भागवत-शास्त्र—ताहाते प्रमाण ॥ ४४ ॥

किन्तु—लेकिन; **शास्त्र-दृष्ट्ये**—शास्त्रों के निर्देशानुसार; **एक**—एक; **करि अनुमान**—मैं अनुमान करता हूँ; **श्री-भागवत-शास्त्र**—*श्रीमद्भागवत* नामक वैदिक शास्त्र; **ताहाते**—उस सम्बन्ध में; **प्रमाण**—प्रमाण।

अनुवाद

"किन्तु मैं शास्त्र के निर्देशों के अनुसार अनुमान कर सकता हूँ। वैदिक शास्त्र श्रीमद्भागवत इस विषय में प्रत्यक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करता है।

ব্রজ-বধূ-সঙ্গে কৃষ্ণের রাসাদি-বিলাস ।
যেই জন কহে, শুনে করিয়া বিশ্বাস ॥ ৪৫ ॥
হৃদ্রোগ-কাম তাঁর তৎকালে হয় ক্ষয় ।
তিন-গুণ-ক্ষোভ নহে, 'মহা-ধীর' হয় ॥ ৪৬ ॥

ব্রজ-বধূ-সঙ্গে কৃষ্ণের রাসাদি-বিলাস ।
যেই জন কহে, শুনে করিয়া বিশ্বাস ॥ ৪৫ ॥
হৃদ্-রোগ-কাম তাঁর তৎকালে হয় ক্ষয় ।
তিন-গুণ-ক্ষোভ নহে, 'মহা-ধীর' হয় ॥ ৪৬ ॥

ব্রজ-বধূ-সঙ্গে—ব্রজভূমি की कन्याओं के संग में; **কৃষ্ণের**—भगवान् कृष्ण की; **রাস-আদি-বিলাস**—रास नृत्य जैसी लीलाएँ; **যেই**—जो; **জন**—लोग; **কহে**—वर्णन करते हैं; **শুনে**—सुनते हैं; **করিয়া বিশ্বাস**—अत्यन्त श्रद्धापूर्वक; **হৃৎ-রোগ**—हृदय का रोग; **কাম**—कामवासना; **তাঁর**—उनके; **তৎ-কালে**—उसी समय; **হয় ক্ষয়**—नष्ट हो जाता है; **তিন-গুণ**—भौतिक प्रकृति के तीन गुणों का; **ক্ষোভ**—विकार; **নহে**—नहीं; **মহা-ধীর**—अत्यन्त धीर; **হয়**—हो जाता है।

अनुवाद

"जब कोई कृष्ण की लीलाओं, यथा गोपियों के साथ उनके रासनृत्य को अत्यन्त श्रद्धापूर्वक सुनता या कहता है, तो उसके हृदय की कामवासनाएँ तथा भौतिक प्रकृति के तीन गुणों से उत्पन्न क्षोभ तुरन्त ही नष्ट हो जाते हैं और वह धीर तथा शान्त बन जाता है।

तात्पर्य

इस सम्बन्ध में श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर की टीका है, *"श्रीमद्भागवत* में वर्णित कृष्ण की रासलीला के विषय में अत्यन्त श्रद्धा तथा दिव्य आध्यात्मिकता से प्रेरित मन से सुनने का इच्छुक कोई भी व्यक्ति तुरन्त स्वाभाविक कामवासनाओं से मुक्त हो जाता है, जो कि भौतिकतावादी मनुष्य के हृदय में पाई जाती हैं।"

जब एक शुद्ध वैष्णव *श्रीमद्भागवत* के विषय में प्रवचन करता है और दूसरा शुद्ध वैष्णव उस स्वरूप-सिद्ध व्यक्ति से श्रवण करता है, तो दोनों ही ऐसे दिव्य जगत् में रहते हैं, जहाँ भौतिक प्रकृति के गुणों के विकार उनका स्पर्श तक नहीं कर पाते। वक्ता तथा श्रोता दोनों ही प्रकृति के गुणों के कल्मष

से छूटकर दिव्य चेतना को प्राप्त करते हैं, जिसमें वे यह जानते हैं कि दिव्य स्तर पर उनका पद परम भगवान् की सेवा करना है। प्राकृत सहजिया वर्ग के लोग, जो कि कृष्ण-लीलाओं को भौतिक जगत् में होने वाले पुरुष तथा स्त्री के आचरण जैसा मानते हैं, कृत्रिम तौर पर यह सोचते हैं कि रासलीला सुनने से उनके रुग्ण हृदयों की कामवासनाएँ कम होंगी। किन्तु वे विधि-विधानों को न मानकर सामान्य नैतिकता का भी उल्लंघन करते हैं, इसलिए रासलीला के विषय में उनका चिन्तन व्यर्थ का प्रयास है, जिससे कभी-कभी वे गोपियों तथा कृष्ण के कार्यकलापों की नकल करने लगते हैं। प्राकृत सहजियों के ऐसी आदतों का निषेध करने के लिए श्री चैतन्य महाप्रभु ने *विश्वास* शब्द का प्रयोग करके उनकी भौतिक बुद्धि को अलग कर दिया है। *श्रीमद्भागवत* (१०.३३.३०) में श्रील शुकदेव गोस्वामी कहते हैं :

नैतत्समाचरेज्जातु मनसापि ह्यनीश्वरः।
विनश्यत्याचरन् मौढ्याद् यथा रुद्रोऽब्धिजं विषम्॥

"जो पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् नहीं है, उसे अपने मन में भी कभी कृष्ण की दिव्य रासलीला के कार्यों का अनुकरण नहीं करना चाहिए। यदि कोई अज्ञानवश ऐसा करता है, तो वह उसी तरह विनष्ट हो जाता है मानो वह शिवजी का अनुकरण कर रहा हो, जिन्होंने समुद्र से निकले विष को पिया था।"

উজ্জ্বল মধুর প্রেম-ভক্তি সেই পায় ।
আনন্দে কৃষ্ণ-মাধুর্যে বিহরে সদায় ॥ ৪৭॥

उज्ज्वल मधुर प्रेम-भक्ति सेइ पाय ।
आनन्दे कृष्ण-माधुर्ये विहरे सदाय ॥ ४७॥

उज्ज्वल—प्रकाशमान; **मधुर**—मधुर; **प्रेम-भक्ति**—कृष्ण का प्रेम भाव; **सेइ**—वह; **पाय**—प्राप्त करता है; **आनन्दे**—दिव्य आनन्द में; **कृष्ण-माधुर्ये**—कृष्ण की लीलाओं की मधुरता; **विहरे**—आनन्द लेता है; **सदाय**—सदैव।

अनुवाद

"कृष्ण के दिव्य, तेजस्वी, मधुर प्रेम का आस्वादन करते हुए ऐसा व्यक्ति कृष्ण की लीलाओं की मधुरता के दिव्य आनन्द को चौबीसों घण्टे भोग सकता है।

विक्रीड़ितं व्रज-वधूभिरिदं च विष्णोः
श्रद्धान्वितोऽनुशृणुयादथ वर्णयेद् यः ।
भक्तिं परां भगवति प्रतिलभ्य कामं
हृद्रोगमाश्वपहिनोत्यचिरेण धीरः ॥ ४८ ॥

विक्रीड़ितं व्रज-वधूभिरिदं च विष्णोः
श्रद्धान्वितोऽनुशृणुयादथ वर्णयेद् यः ।
भक्तिं परां भगवति प्रतिलभ्य कामं
हृद्-रोगमाश्वपहिनोत्यचिरेण धीरः ॥ ४८ ॥

विक्रीड़ितम्—रास नृत्य की लीला; **व्रज-वधूभिः**—व्रज की कन्याएँ, गोपियाँ; **इदम्**—यह; **च**—तथा; **विष्णोः**—भगवान् कृष्ण की; **श्रद्धा-अन्वितः**—दिव्य श्रद्धापूर्वक; **अनुशृणुयात्**—परम्परा में निरन्तर सुनता है; **अथ**—तथा; **वर्णयेत्**—वर्णन करता है; **यः**—जो; **भक्तिम्**—भक्ति; **पराम्**—दिव्य; **भगवति**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के प्रति; **प्रतिलभ्य**—प्राप्त करके; **कामम्**—भौतिक कामवासनाएँ; **हृत्-रोगम्**—हृदय का रोग; **आशु**—अति शीघ्र; **अपहिनोति**—त्याग देता है; **अचिरेण**—बिना विलम्ब के; **धीरः**—जो उन्नत भगवत्सेवा द्वारा धीर है।

अनुवाद

"'एक दिव्य रूप से धीर व्यक्ति, जो गोपियों के साथ कृष्ण के रासनृत्य की लीलाओं के विषय में किसी स्वरूपसिद्ध व्यक्ति से श्रद्धा तथा प्रेमपूर्वक निरन्तर श्रवण करता है या जो कोई इनका वर्णन करता है, वह परम पुरुष भगवान् के चरणकमलों में पूर्ण दिव्य भक्ति प्राप्त कर सकता है। इस तरह भौतिक कामेच्छाएँ, जो कि समस्त भौतिकतावादी व्यक्तियों के हृदय का रोग है, उसके लिए तुरन्त ही पूर्णतः विनष्ट हो जाती हैं।

तात्पर्य

कृष्ण की सारी लीलाएँ अलौकिक हैं एवं गोपियाँ भी दिव्य पद को प्राप्त हैं। अतएव यदि गोपियों तथा कृष्ण की लीलाओं को गम्भीरतापूर्वक समझ लिया जाए, तो मनुष्य निश्चित रूप से भौतिक आसक्ति से छूट जायेगा। तब भौतिक कामेच्छाओं के उदय होने की कोई सम्भावना नहीं रहती।

যে শুনে, যে পড়ে, তাঁর ফল এতাদৃশী ।
সেই ভাবাবিষ্ট যেই সেবে অহর্নিশি ॥৪৯॥
তাঁর ফল কি কহিমু, কহনে না যায় ।
নিত্য-সিদ্ধ সেই, প্রায়-সিদ্ধ তাঁর কায় ॥৫০॥

য়ে শুনে, য়ে পড়ে, তাঁর ফল এতাদৃশী ।
সেই ভাবাবিষ্ট য়েই সেবে অহর্নিশি ॥৪৯॥
তাঁর ফল কি কহিমু, কহনে না য়ায় ।
নিত্য-সিদ্ধ সেই, প্রায়-সিদ্ধ তাঁর কায় ॥৫০॥

য়ে শুনে—जो कोई भी सुनता है; **য়ে পড়ে**—जो पढ़ता है; **তাঁর**—उसका; **ফল**—परिणाम; **এতাদৃশী**—यह; **সেই**—वह; **ভাব-আবিষ্ট**—सदैव कृष्ण के विचारों में निमग्न; **য়েই সেবে**—जो सेवा करता है; **অহঃ-নিশি**—दिन-रात; **তাঁর**—उसका; **ফল**—परिणाम; **কি কহিমু**—मैं क्या कहूँगा; **কহনে না য়ায়**—यह वर्णन करना कठिन है; **নিত্য-সিদ্ধ**—नित्य सिद्ध; **সেই**—ऐसा व्यक्ति; **প্রায়-সিদ্ধ**—दिव्य; **তাঁর**—उसका; **কায়**—शरीर।

अनुवाद

"श्रील रूप गोस्वामी के पदचिह्नों का अनुसरण करते हुए यदि दिव्य पद को प्राप्त व्यक्ति कृष्ण की रासलीला के विषय में सुनता और कहता है तथा अपने मन में भगवान् की दिन-रात सेवा करते हुए कृष्ण के विचारों में सदा डूबा रहता है, तो उसे जो फल मिलेगा उसके विषय में मैं क्या कहूँ? यह आध्यात्मिक रूप से इतना महान् है कि शब्दों द्वारा इसे व्यक्त नहीं किया जा सकता। ऐसा व्यक्ति भगवान् का नित्यमुक्त संगी होता है और उसका शरीर पूर्णतया आध्यात्मिक होता है। यद्यपि वह भौतिक नेत्रों को दिखता है, किन्तु वह आध्यात्मिक पद को प्राप्त रहता है और उसके सारे कार्यकलाप आध्यात्मिक होते हैं। कृष्ण की इच्छा से ऐसे भक्त को आध्यात्मिक शरीर प्राप्त हुआ समझा जाता है।

রাগানুগ-মার্গে জানি রায়ের ভজন ।
সিদ্ধ-দেহ-তুল্য, তাতে 'প্রাকৃত' নহে মন ॥৫১॥

রাগানুগ-মার্গে জানি রায়ের ভজন ।
সিদ্ধ-দেহ-তুল্য, তাতে 'প্রাকৃত' নহে মন ॥৫১॥

रागानुग-मार्गे—कृष्ण के प्रति स्वाभाविक प्रेम के मार्ग पर; **जानि**—हम समझ सकते हैं; **रायेर भजन**—रामानन्द राय की भक्तिमय सेवा; **सिद्ध-देह**—आध्यात्मिक देह; **तुल्य**—समान; **ताते**—अतः; **प्राकृत**—भौतिक; **नहे**—नहीं है; **मन**—मन।

अनुवाद

"श्रील रामानन्द राय भगवान् के रागानुग प्रेम (स्वतःस्फूर्त प्रेम) के मार्ग पर स्थित हैं। अतः वे अपने आध्यात्मिक शरीर में हैं और उनका मन भौतिक रूप से प्रभावित नहीं है।

आमिह रायेर स्थाने शुनि कृष्ण-कथा ।
शुनिते इच्छा हय यदि, पुनः याह तथा ॥५२॥

आमिह रायेर स्थाने शुनि कृष्ण-कथा ।
शुनिते इच्छा हय यदि, पुनः याह तथा ॥५२॥

आमिह—मैं भी; **रायेर स्थाने**—रामानन्द राय से; **शुनि**—सुनता हूँ; **कृष्ण-कथा**—कृष्ण की कथाएँ; **शुनिते**—सुनने की; **इच्छा**—इच्छा; **हय**—है; **यदि**—यदि; **पुनः**—फिर से; **याह**—जाओ; **तथा**—वहाँ।

अनुवाद

"मैं भी रामानन्द राय से कृष्ण विषयक कथाएँ सुनता हूँ। यदि तुम ऐसी कथाएँ सुनना चाहते हो, तो उनके पास पुनः जाओ।

मोर नाम लइह,—'तेहो पाठाइला मोरे ।
तोमार स्थाने कृष्ण-कथा शुनिबार तरे' ॥५३॥

मोर नाम लइह,—'तेहो पाठाइला मोरे ।
तोमार स्थाने कृष्ण-कथा शुनिबार तरे' ॥५३॥

मोर—मेरा; **नाम**—नाम; **लइह**—लेना; **तेहो**—उन्होंने; **पाठाइला**—भेजा है; **मोरे**—मुझे; **तोमार स्थाने**—आपसे; **कृष्ण-कथा**—कृष्ण की लीलाएँ; **शुनिबार तरे**—सुनने के लिए।

अनुवाद

"तुम उनके समक्ष यह कहकर मेरा नाम ले सकते हो कि, 'उन्होंने आपसे कृष्ण के विषय में सुनने के लिए मुझे भेजा है।'

शीघ्र याह, यावत्तेँहो आछेन सभाते'' ।
एत शुनि' प्रद्युम्न-मिश्र चलिला तुरिते ॥५४॥

शीघ्र याह, यावत्तेंहो आछेन सभाते" ।
एत शुनि' प्रद्युम्न-मिश्र चलिला तुरिते ॥५४॥

शीघ्र याह—जल्दी आओ; **यावत्**—जब तक; **तेंहो**—वे; **आछेन**—हैं; **सभाते**—सभाकक्ष में; **एत शुनि'**—यह सुनकर; **प्रद्युम्न-मिश्र**—प्रद्युम्न मिश्र; **चलिला**—चला गया; **तुरिते**—बहुत जल्दी से।

अनुवाद

"जब तक वे सभाकक्ष में हैं, तुम दल्दी से जाओ।" यह सुनकर प्रद्युम्न मिश्र तुरन्त चला गया।

राय-पाश गेल, राय प्रणति करिल ।
'आज्ञा कर, ये लागि' आगमन हैल' ॥५५॥

राय-पाश गेल, राय प्रणति करिल ।
'आज्ञा कर, ये लागि' आगमन हैल' ॥५५॥

राय-पाश—रामानन्द राय के पास; **गेल**—वह गया; **राय**—रामानन्द राय ने; **प्रणति करिल**—प्रणाम किया; **आज्ञा कर**—कृपया आदेश दीजिए; **ये लागि'**—किस उद्देश्य से; **आगमन हैल**—आप आये हैं।

अनुवाद

प्रद्युम्न मिश्र रामानन्द राय के पास गया, जिन्होंने उन्हें सादर नमस्कार किया और कहा, "कृपया आज्ञा दें। आप किस कार्य से आये हैं?"

मिश्र कहे,—'महाप्रभु पाठाइला मोरे ।
तोमार स्थाने कृष्ण-कथा शुनिबार तरे' ॥५६॥

मिश्र कहे,—'महाप्रभु पाठाइला मोरे ।
तोमार स्थाने कृष्ण-कथा शुनिबार तरे' ॥५६॥

मिश्र कहे—प्रद्युम्न मिश्र ने कहा; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **पाठाइला मोरे**—मुझे भेजा है; **तोमार स्थाने**—आपसे; **कृष्ण-कथा**—भगवान् कृष्ण की कथाएँ; **शुनिबार तरे**—सुनने के लिए।

अनुवाद

प्रद्युम्न मिश्र ने उत्तर दिया, "श्री चैतन्य महाप्रभु ने मुझे आपसे कृष्ण-कथाएँ सुनने के लिए भेजा है।"

শুনি' রামানন্দ রায় হৈলা প্রেমাবেশে ।
কহিতে লাগিলা কিছু মনের হরিষে ॥৫৭॥

शुनि' रामानन्द राय हैला प्रेमावेशे ।
कहिते लागिला किछु मनेर हरिषे ॥५७॥

शुनि'—सुनकर; **रामानन्द राय**—रामानन्द राय; **हैला**—हो गये; **प्रेम-आवेशे**—प्रेमभाव में आविष्ट; **कहिते लागिला**—कहना प्रारम्भ किया; **किछु**—कुछ; **मनेर हरिषे**—दिव्य आनन्द में।

अनुवाद

यह सुनकर रामानन्द राय प्रेमानन्द में मग्न हो गये और अतीव दिव्य हर्षपूर्वक बोलने लगे।

"প্রভুর আজ্ঞায় কৃষ্ণ-কথা শুনিতে আইলা এথা ।
ইহা বই মহা-ভাগ্য আমি পাব কোথা?" ॥৫৮॥

"प्रभुर आज्ञाय कृष्ण-कथा शुनिते आइला एथा ।
इहा वइ महा-भाग्य आमि पाब कोथा?" ॥५८॥

प्रभुर आज्ञाय—श्री चैतन्य महाप्रभु के आदेश पर; **कृष्ण-कथा**—भगवान् कृष्ण की कथाएँ; **शुनिते**—सुनने के लिए; **आइला एथा**—आप यहाँ आये हैं; **इहा वइ**—इसके बिना; **महा-भाग्य**—महा सौभाग्य; **आमि**—मैं; **पाब**—पाऊँगा; **कोथा**—कहाँ।

अनुवाद

"आप श्री चैतन्य महाप्रभु के आदेश का पालन करते हुए कृष्ण के विषय में सुनने के लिए आये हैं। यह मेरा परम सौभाग्य है। भला और किस तरह मैं ऐसा अवसर पा सकता था?"

এত কহি তারে লঞা নিভৃতে বসিলা ।
'কি কথা শুনিতে চাহ?' মিশ্রেরে পুছিলা ॥৫৯॥

एत कहि तारे लञा निभृते वसिला ।
'कि कथा शुनिते चाह?' मिश्रेरे पुछिला ॥ ५९ ॥

एत कहि—यह कहकर; **तारे**—उन्हें; **लञा**—लेकर; **निभृते वसिला**—एकान्त स्थान में बैठ गये; **कि कथा**—किस प्रकार की कथा; **शुनिते चाह**—आप सुनना चाहते हैं; **मिश्रेरे पुछिला**—उन्होंने प्रद्युम्न मिश्र से पूछा।

अनुवाद

यह कहकर श्री रामानन्द राय प्रद्युम्न मिश्र को एकान्त स्थान में ले गये और उससे पूछा, "आप मुझसे किस तरह की कृष्ण-कथा सुनना चाहते हैं?"

তেঁহো কহে,—"যে কহিলা বিদ্যানগরে ।
সেই কথা ক্রমে তুমি কহিবা আমারে ॥ ৬০ ॥
तेंहो कहे,—"ये कहिला विद्यानगरे ।
सेइ कथा क्रमे तुमि कहिबा आमारे ॥ ६० ॥

तेंहो कहे—उसने उत्तर दिया; **ये**—जो; **कहिला**—आपने कहा; **विद्यानगरे**—विद्यानगर में; **सेइ कथा**—वही विषय; **क्रमे**—क्रमपूर्वक; **तुमि**—आप; **कहिबा**—कृपया कहिए; **आमारे**—मुझसे।

अनुवाद

प्रद्युम्न मिश्र ने उत्तर दिया, "कृपया मुझसे वही कथाएँ कहें, जो आपने विद्यानगर में कही थीं।

আনের কি কথা, তুমি—প্রভুর উপদেষ্টা! ।
আমি ত' ভিক্ষুক বিপ্র, তুমি—মোর পোষ্টা ॥ ৬১ ॥
आनेर कि कथा, तुमि—प्रभुर उपदेष्टा! ।
आमि त' भिक्षुक विप्र, तुमि—मोर पोष्टा ॥ ६१ ॥

आनेर कि कथा—अन्यों का क्या कहना; **तुमि**—आप; **प्रभुर उपदेष्टा**—श्री चैतन्य महाप्रभु के उपदेशकर्ता; **आमि**—मैं; **त'**—निश्चित रूप से; **भिक्षुक**—भिखारी; **विप्र**—ब्राह्मण; **तुमि**—आप; **मोर**—मेरे; **पोष्टा**—पालक।

अनुवाद

"आप तो श्री चैतन्य महाप्रभु के भी उपदेशक हैं, अन्यों की क्या कही जाए। मैं तो एक भिखारी ब्राह्मण हूँ और आप मेरे पालनकर्ता हैं।

ভাল, মন্দ—কিছু আমি পুছিতে না জানি ।
'দীন' দেখি' কৃপা করি' কহিবা আপনি'' ॥৬২॥

भाल, मन्द—किछु आमि पुछिते ना जानि ।
'दीन' देखि' कृपा करि' कहिबा आपनि" ॥६२॥

भाल—अच्छा; **मन्द**—बुरा; **किछु**—कुछ भी; **आमि**—मैं; **पुछिते**—पूछना; **ना जानि**—नहीं जानता; **दीन**—ज्ञान में दीन; **देखि'**—देखकर; **कृपा करि'**—अत्यन्त कृपापूर्वक; **कहिबा**—कृपया कहिए; **आपनि**—आपकी अपनी इच्छा से।

अनुवाद

"मैं नहीं जानता कि कैसे पूछना चाहिए, क्योंकि मैं नहीं जानता कि क्या अच्छा है और क्या बुरा है। मुझे अल्प ज्ञान वाला देखकर आप अपनी इच्छा से जो मेरे लिए अच्छा हो वही कहें।"

তবে রামানন্দ ক্রমে কহিতে লাগিলা ।
কৃষ্ণ-কথা-রসামৃত-সিন্ধু উথলিলা ॥৬৩॥

তবে রামানন্দ ক্রমে কহিতে লাগিলা ।
কৃষ্ণ-কথা-রসামৃত-সিন্ধু উথলিলা ॥৬৩॥

তবে—तत्पश्चात्; **রামানন্দ**—रामानन्द राय; **ক্রমে**—क्रमपूर्वक; **কহিতে লাগিলা**—कहना प्रारम्भ किया; **কৃষ্ণ-কথা**—कृष्ण की कथा; **রসামৃত-সিন্ধু**—दिव्य रसों का समुद्र; **উথলিলা**—उद्वेलित हो गया।

अनुवाद

तत्पश्चात् रामानन्द राय ने क्रम से कृष्ण-कथाएँ कहनी शुरू कर दीं। इस तरह उन कथाओं के दिव्य रस का सागर उफनने लगा।

আপনে প্রশ্ন করি' পাছে করেন সিদ্ধান্ত ।
তৃতীয় প্রহর হৈল, নহে কথা-অন্ত ॥৬৪॥

आपने प्रश्न करि' पाछे करेन सिद्धान्त ।
तृतीय प्रहर हैल, नहे कथा-अन्त ॥ ६४ ॥

आपने—स्वयं; **प्रश्न करि'**—प्रश्न करके; **पाछे**—उसके बाद; **करेन सिद्धान्त**—निष्कर्ष देते हैं; **तृतीय प्रहर हैल**—दोपहर हो गई; **नहे कथा-अन्त**—उन कथाओं का कोई अन्त नहीं हुआ।

अनुवाद

वे स्वयं प्रश्न करते और फिर निर्णयात्मक कथनों से उनका उत्तर देते। जब दोपहर हो गई, तो भी कथाओं का अन्त नहीं हुआ।

वक्ता श्रोता कहे शुने दुँहे प्रेमावेशे ।
आत्म-स्मृति नाहि, काहाँ जानिब दिन-शेषे ॥ ६५ ॥

वक्ता श्रोता कहे शुने दुँहे प्रेमावेशे ।
आत्म-स्मृति नाहि, काहाँ जानिब दिन-शेषे ॥ ६५ ॥

वक्ता—कहने वाला; **श्रोता**—सुनने वाला; **कहे**—कहता है; **शुने**—सुनता है; **दुँहे**—वे दोनों; **प्रेम-आवेशे**—प्रेम भाव में; **आत्म-स्मृति नाहि**—देह स्मृति नहीं रही; **काहाँ**—कहाँ; **जानिब**—जान सकते; **दिन-शेषे**—दिन का अन्त।

अनुवाद

वक्ता तथा श्रोता प्रेमावेश में बोलते तथा सुनते रहे। इस तरह वे अपने शरीर की सुधि-बुधि खो बैठे। तो फिर वे दिन के अन्त को कैसे समझ पाते?

सेवक कहिल,—'दिन हैल अवसान' ।
तबे राय कृष्ण-कथार करिला विश्राम ॥ ६६ ॥

सेवक कहिल,—'दिन हैल अवसान' ।
तबे राय कृष्ण-कथार करिला विश्राम ॥ ६६ ॥

सेवक कहिल—सेवक ने बताया; **दिन**—दिन; **हैल अवसान**—समाप्त हो गया है; **तबे**—उस समय; **राय**—रामानन्द राय ने; **कृष्ण-कथार**—कृष्ण की कथाओं का; **करिला विश्राम**—समापन किया।

अनुवाद

सेवक ने उन्हें बतलाया कि, "दिन ढल चुका है।" तब रामानन्द राय ने कृष्ण विषयक अपनी कथाएँ समाप्त कीं।

বহু-সম্মান করি' মিশ্রে বিদায় দিলা ।
'কৃতার্থ হইলাঙ' বলি' মিশ্র নাচিতে লাগিলা ॥৬৭॥

বহু-সম্মান করি' মিশ্রে বিদায় দিলা ।
'কৃতার্থ হইলাঙ' বলি' মিশ্র নাচিতে লাগিলা ॥ ৬৭॥

বহু-সম্মান—अत्यन्त सम्मानपूर्ण व्यवहार; **করি'**—करके; **মিশ্রে**—प्रद्युम्न मिश्र को; **বিদায় দিলা**—विदा किया; **কৃতার্থ হইলাঙ**—मैं अत्यन्त सन्तुष्ट हो गया हूँ; **বলি'**—कहकर; **মিশ্র**—प्रद्युम्न मिश्र; **নাচিতে লাগিলা**—नाचने लगा।

अनुवाद

रामानन्द राय ने प्रद्युम्न मिश्र का अत्यधिक सम्मान किया और उसे विदा किया। प्रद्युम्न मिश्र ने कहा, "मैं अत्यधिक तुष्ट हूँ।" तब वह नाचने लगा।

ঘরে গিয়া মিশ্র কৈল স্নান, ভোজন ।
সন্ধ্যা-কালে দেখিতে আইল প্রভুর চরণ ॥৬৮॥

ঘরে গিয়া মিশ্র কৈল স্নান, ভোজন ।
সন্ধ্যা-কালে দেখিতে আইল প্রভুর চরণ ॥ ৬৮॥

ঘরে গিয়া—घर लौटकर; **মিশ্র**—प्रद्युम्न मिश्र ने; **কৈল**—किया; **স্নান**—स्नान; **ভোজন**—भोजन; **সন্ধ্যা-কালে**—साँय को; **দেখিতে**—देखने के लिए; **আইল**—आये; **প্রভুর চরণ**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमल।

अनुवाद

घर लौटकर प्रद्युम्न मिश्र ने स्नान और भोजन किया। शाम को वह श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों का दर्शन करने आया।

প্রভুর চরণ বন্দে উল্লসিত-মনে ।
প্রভু কহে,—'কৃষ্ণ-কথা হইল শ্রবণে'? ॥৬৯॥

प्रभुर चरण वन्दे उल्लसित-मने ।
प्रभु कहे,—'कृष्ण-कथा हइल श्रवणे'? ॥ ६९ ॥

प्रभुर—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **चरण**—चरणकमलों की; **वन्दे**—वह वन्दना करता है; **उल्लसित-मने**—अत्यन्त प्रसन्नातपूर्वक; **प्रभु कहे**—श्री चैतन्य महाप्रभु कहते हैं; **कृष्ण-कथा**—कृष्ण की लीलाएँ; **हइल श्रवणे**—क्या तुमने सुनीं।

अनुवाद

उसने अत्यधिक प्रसन्नता से श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों की पूजा की। महाप्रभु ने पूछा, 'क्या तुमने कृष्ण-कथाएँ सुनीं?"

মিশ্র কহে,—"প্রভু, মোরে কৃতার্থ করিলা ।
কৃষ্ণ-কথামৃতার্ণবে মোরে ডুবাইলা ॥ ৭০ ॥
মিশ্র কহে,—"প্রভু, মোরে কৃতার্থ করিলা ।
কৃষ্ণ-কথামৃতার্ণবে মোরে ডুবাইলা ॥ ৭০ ॥

মিশ্র কহে—प्रद्युम्न मिश्र ने कहा; **প্রভু**—मेरे प्रिय प्रभु; **মোরে**—मुझे; **কৃতার্থ**—सन्तुष्ट; **করিলা**—आपने कर दिया; **কৃষ্ণ-কথা**—कृष्ण की कथाओं के; **অমৃত-অর্ণবে**—अमृत के समुद्र में; **মোরে**—मुझे; **ডুবাইলা**—आपने डुबा दिया।

अनुवाद

प्रद्युम्न मिश्र ने कहा, "हे प्रभु, आपने मुझे आपका अत्यन्त कृतज्ञ बना दिया है, क्योंकि आपने कृष्ण-कथा के अमृत-सागर में मुझे डुबो दिया है।

রামানন্দ রায়-কথা কহিলে না হয় ।
'মনুষ্য' নহে রায়, কৃষ্ণ-ভক্তি-রস-ময় ॥ ৭১ ॥
রামানন্দ রায়-কথা কহিলে না হয় ।
'মনুষ্য' নহে রায়, কৃষ্ণ-ভক্তি-রস-ময় ॥ ৭১ ॥

রামানন্দ রায়-কথা—रामानन्द राय की वार्ताएँ; **কহিলে**—वर्णन करना; **না হয়**—सम्भव नहीं है; **মনুষ্য**—एक साधारण मनुष्य; **নহে**—नहीं हैं; **রায়**—रामानन्द राय; **কৃষ্ণ-ভক্তি-রস-ময়**—भगवान् कृष्ण की प्रेममयी सेवा में निमग्न।

अनुवाद

"मैं रामानन्द राय की कथाओं का ठीक-ठीक वर्णन नहीं कर सकता, क्योंकि वे कोई सामान्य मनुष्य नहीं हैं। वे कृष्ण की भक्ति में पूर्णतया निमग्न हैं।

तात्पर्य

गुरु को साधारण व्यक्ति मानना निषेध है (*गुरुषु नरमतिः*)। जब रामानन्द राय ने प्रद्युम्न मिश्र से बात की, तो प्रद्युम्न मिश्र की समझ में आया कि वे कोई साधारण मनुष्य नहीं हैं। आध्यात्मिक रूप से उन्नत व्यक्ति, जो आध्यात्मिक गुरु के रूप में स्वीकृत है—जब बोलता है, तो पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् उसके अन्तःकरण से उसे निर्देश देते हैं। वह स्वयं नहीं बोल रहा होता। दूसरे शब्दों में, जब कोई शुद्ध भक्त या गुरु बोलता है, तो वह जो कुछ कहता है, उसे परम्परा पद्धति में पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् द्वारा प्रत्यक्ष बोला हुआ मानना चाहिए।

आर एक कथा राय कहिला आमारे ।
'कृष्ण-कथा-वक्ता करि' ना जानिह मोरे ॥७२॥
आर एक कथा राय कहिला आमारे ।
'कृष्ण-कथा-वक्ता करि' ना जानिह मोरे ॥७२॥

आर—दूसरी; **एक**—एक; **कथा**—बात; **राय**—रामानन्द राय ने; **कहिला आमारे**—मुझसे कही; **कृष्ण-कथा-वक्ता**—कृष्ण कथाओं का वक्ता; **करि'**—जैसे; **ना जानिह मोरे**—मुझे मत मानो।

अनुवाद

"एक अन्य बात भी रामानन्द राय ने मुझसे कही है। 'तुम मुझे इन कृष्ण-कथाओं का वक्ता मत मानना।

मोर मुखे कथा कहेन आपने गौरचन्द्र ।
यैछे कहाय, तैछे कहि,—यैन वीणा-यन्त्र ॥७३॥
मोर मुखे कथा कहेन आपने गौरचन्द्र ।
य्रैछे कहाय, तैछे कहि,—य्रेन वीणा-य्रन्त्र ॥७३॥

मोर मुखे—मेरे मुख में; **कथा**—कथा; **कहेन**—कहते हैं; **आपने**—स्वयं; **गौर-चन्द्र**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु; **ग्रैछे कहाय**—जैसा वे बुलवाते हैं; **तैछे कहि**—वहीं मैं कहता हूँ; **ग्रेन**—जैसे; **वीणा-ग्रन्त्र**—वीणा नामक तारयुक्त यंत्र।

अनुवाद

"'मैं जो भी कहता हूँ, वह श्री चैतन्य महाप्रभु स्वयं बोलते हैं। मैं एक वीणा की तरह हूँ। वे मुझसे जो कहलवाते हैं, उसका ही मैं उच्चारण करता हूँ।

মোর মুখে কহায় কথা, করে পরচার ।
পৃথিবীতে কে জানিবে এ-লীলা তাঁহার?' ॥৭৪॥

মোর মুখে কহায় কথা, করে পরচার ।
পৃথিবীতে কে জানিবে এ-লীলা তাঁহার?' ॥৭৪॥

মোর মুখে—मेरे मुख से; **কহায়**—कहलवाते हैं; **কথা**—प्रवचन; **করে পরচার**—प्रचार करते हैं; **পৃথিবীতে**—इस संसार में; **কে জানিবে**—कौन समझेगा; **এ-লীলা**—यह लीला; **তাঁহার**—उनकी।

अनुवाद

"'इस तरह महाप्रभु कृष्णभावनामृत सम्प्रदाय का प्रचार करने के लिए मेरे मुख से बोलते हैं। इस संसार में ऐसा कौन है, जो महाप्रभु की इस लीला को समझ सकेगा?'

যে-সব শুনিলুঁ, কৃষ্ণ-রসের সাগর ।
ব্রহ্মাদি-দেবের এ সব না হয় গোচর ॥৭৫॥

গ্রে-সব শুনিলুঁ, কৃষ্ণ-রসের সাগর ।
ব্রহ্মাদি-দেবের এ সব না হয় গোচর ॥৭৫॥

গ্রে-সব—वह सब; **শুনিলুঁ**—मैंने सुना; **কৃষ্ণ-রসের**—भगवान् कृष्ण के अमृत का; **সাগর**—समुद्र; **ব্রহ্মা-আদি-দেবের**—ब्रह्माजी आदि देवताओं के लिए; **এ সব**—यह सब; **না হয় গোচর**—समझना सम्भव नहीं है।

अनुवाद

"मैंने रामानन्द राय से जो कुछ सुना है, वह कृष्ण-कथाओं के अमृत-

सागर के तुल्य है। यहाँ तक कि ब्रह्मादि देवता भी इन कथाओं को नहीं समझ पाते।

হেন 'রস' পান মোরে করাইলা তুমি ।
জন্মে জন্মে তোমার পায় বিকাইলাঙ আমি ॥৭৬॥

হেন 'রস' পান মোরে করাইলা তুমি ।
জন্মে জন্মে তোমার পায় বিকাইলাঙ আমি ॥৭৬॥

हेन रस—ऐसा आध्यात्मिक रस; **पान**—पीना; **मोरे**—मुझे; **कराइला तुमि**—आपने करवाया; **जन्मे जन्मे**—जन्म जन्मातर तक; **तोमार पाय**—आपके चरणों में; **विकाइलाङ आमि**—मैं बिक गया हूँ।

अनुवाद

"हे प्रभु, आपने कृष्ण-कथा का यह दिव्य अमृत मुझे पिलाया है। अतएव मैं जन्म-जन्मान्तर के लिए आपके चरणकमलों में बिक गया हूँ।"

প্রভু কহে,—"রামানন্দ বিনয়ের খনি ।
আপনার কথা পর-মুণ্ডে দেন আনি' ॥৭৭॥

প্রভু কহে,—"রামানন্দ বিনয়ের খনি ।
আপনার কথা পর-মুণ্ডে দেন আনি' ॥৭৭॥

प्रभु कहे—महाप्रभु ने उत्तर दिया; **रामानन्द**—रामानन्द राय; **विनयेर खनि**—विनम्रता की खान; **आपनार कथा**—अपने शब्द; **पर-मुण्डे**—दूसरे के मस्तक पर; **देन**—डाल दिये; **आनि'**—लाकर।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "रामानन्द राय समस्त विनयशीलता की खान हैं। इसलिए उन्होंने अपने शब्दों को दूसरे की बुद्धि पर आरोपित कर दिया है।

মহানুভবের এই সহজ 'স্বভাব' হয় ।
আপনার গুণ নাহি আপনে কহয়" ॥৭৮॥

महानुभवेर एइ सहज 'स्वभाव' हय ।
आपनार गुण नाहि आपने कहय" ॥ ७८ ॥

महानुभवेर—अनुभूति में उन्नत लोगों का; **एइ**—यह; **सहज**—स्वाभाविक; **स्वभाव**—लक्षण; **हय**—है; **आपनार गुण**—अपने निजी गुण; **नाहि**—नहीं; **आपने**—स्वयं; **कहय**—कहते।

अनुवाद

"जो लोग भक्ति में उन्नत होते हैं, उनका यह सहज स्वभाव है। वे अपने सद्गुणों का स्वयं बखान नहीं करते।"

রামানন্দ-রায়ের এই কহিলু গুণ-লেশ ।
প্রদ্যুম্ন মিশ্রেরে যৈছে কৈলা উপদেশ ॥ ৭৯ ॥

रामानन्द-रायेर एइ कहिलु गुण-लेश ।
प्रद्युम्न मिश्रेरे य्रैछे कैला उपदेश ॥ ७९ ॥

रामानन्द रायेर श्री रागानन्द राय का; **एइ**—यह; **कहिलु**—मैंने कहा; **गुण-लेश**—दिव्य गुणों का एक अंश मात्र; **प्रद्युम्न मिश्रेरे**—प्रद्युम्न मिश्र को; **य्रैछे**—जिस प्रकार; **कैला उपदेश**—उन्होंने उपदेश दिया।

अनुवाद

मैंने रामानन्द राय के दिव्य गुणों के अंश मात्र का वर्णन किया है, जो प्रद्युम्न मिश्र को उपदेश देते समय प्रकट हुए।

'গৃহস্থ' হঞা নহে রায় ষড়্-বর্গের বশে ।
'বিষয়ী' হঞা সন্ন্যাসীরে উপদেশে ॥ ৮০ ॥

'गृहस्थ' हञा नहे राय षड्-वर्गेर वशे ।
'विषयी' हञा सन्न्यासीरे उपदेशे ॥ ८० ॥

गृहस्थ हञा—एक गृहस्थ होकर; **नहे**—नहीं है; **राय**—रामानन्द राय; **षट्-वर्गेर वशे**—छः प्रकार के शारीरिक परिवर्तनों के वश में; **विषयी हञा**—सांसारिक (भोगी जैसा) होकर; **सन्न्यासीरे उपदेशे**—संन्यास आश्रम के लोगों को उपदेश देते।

अनुवाद

यद्यपि रामानन्द राय गृहस्थ थे, किन्तु वे छः प्रकार के शारीरिक

परिवर्तनों के वशीभूत नहीं थे। यद्यपि ऊपर से वे धन-सम्पत्ति में आसक्त व्यक्ति प्रतीत होते थे, किन्तु उन्होंने संन्यासियों तक को उपदेश दिया।

तात्पर्य

बाहर से श्री रामानन्द राय गृहस्थ और माया के वश में प्रतीत होते थे। वे आत्मसंयमी ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ या संन्यासी न थे। गृहस्थजन, जो कि माया के वश में रहते हैं, इन्द्रिय-भोग के लिए ही गृहस्थ जीवन स्वीकार करते हैं, किन्तु दिव्य पद को प्राप्त वैष्णव छः प्रकार के शारीरिक परिवर्तनों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद तथा मात्सर्य) के भौतिक नियमों द्वारा प्रभावित नहीं होते, भले ही वे गृहस्थ की भूमिका क्यों न निभा रहे हों। इस प्रकार, यद्यपि श्रील रामानन्द राय गृहस्थ की भूमिका निभा रहे थे और धन-सम्पत्ति से आसक्त सामान्य व्यक्ति माने जाते थे, किन्तु वे सदैव दिव्य कृष्ण-लीलाओं में निमग्न रहते थे। इसलिए उनका मन आध्यात्मिक पद को प्राप्त था और वे कृष्ण के विषय में ही रुचि लेते थे। रामानन्द राय उन मायावादी निर्विशेषवादियों या भौतिकतावादी तार्किकों में से नहीं थे, जो कृष्ण की दिव्य लीलाओं के सिद्धान्तों के विरोधी हैं। वे पहले से संन्यासी और आध्यात्मिकता में स्थित थे, अतएव वे अपनी आध्यात्मिक शक्ति से बालू को सोने में बदलने में समर्थ थे। दूसरे शब्दों में, वे किसी व्यक्ति को भौतिक पद से आध्यात्मिक पद तक ऊपर उठा सकते थे।

এই-সব গুণ তাঁর প্রকাশ করিতে ।
মিশ্রেরে পাঠাইলা তাহাঁ শ্রবণ করিতে ॥ ৮১ ॥

এइ-সব গুণ তাঁর প্রকাশ করিতে ।
মিশ্রেরে পাঠাইলা তাহাঁ শ্রবণ করিতে ॥ ৮১ ॥

এइ-সব—ये सब; **গুণ**—गुण; **তাঁর**—रामानन्द राय के; **প্রকাশ করিতে**—प्रकट करने के लिए; **মিশ্রেরে**—प्रद्युम्न मिश्र को; **পাঠাইলা**—उन्होंने भेजा; **তাহাঁ**—वहाँ; **শ্রবণ করিতে**—सुनने के लिए।

अनुवाद

श्री रामानन्द राय के दिव्य गुणों के प्रदर्शनार्थ ही श्री चैतन्य महाप्रभु ने प्रद्युम्न मिश्र को उनसे कृष्ण विषयक चर्चाएँ सुनने के लिए भेजा था।

ভক্ত-গুণ প্রকাশিতে প্রভু ভাল জানে ।
নানা-ভঙ্গীতে গুণ প্রকাশি' নিজ-লাভ মানে ॥ ৮২ ॥

ভক্ত-গুণ প্রকাশিতে প্রভু ভাল জানে ।
নানা-ভঙ্গীতে গুণ প্রকাশি' নিজ-লাভ মানে ॥ ৮২ ॥

ভক্ত-গুণ—এক भक्त के गुण; **प्रकाशिते**—प्रदर्शित करना; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **भाल जाने**—भलीभाँति जानते हैं किस प्रकार; **नाना-भङ्गीते**—विविध प्रकार से; **गुण**—गुण; **प्रकाशि'**—प्रकट करके; **निज-लाभ**—अपना लाभ; **माने**—वे मानते हैं।

अनुवाद

पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु अच्छी तरह जानते हैं कि अपने भक्तों के गुणों को किस तरह प्रकट किया जाए। इसलिए वे एक चित्रकार की भाँति इसे अनेक प्रकारों से प्रदर्शित करते हैं और इसे वे निजी लाभ मानते हैं।

আর এক 'স্বভাব' গৌরের শুন, ভক্ত-গণ ।
ঐশ্বর্য-স্বভাব গূঢ় করে প্রকটন ॥ ৮৩ ॥

আর এক 'স্বভাব' গৌরের শুন, ভক্ত-গণ ।
ঐশ্বর্য্য-স্বভাব গূঢ় করে প্রকটন ॥ ৮৩ ॥

आर—दूसरा; **एक**—एक; **स्वभाव**—स्वभाव; **गौरेर**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु का; **शुन**—सुनो; **भक्त-गण**—हे भक्तों; **ऐश्वर्य्य-स्वभाव**—ऐश्वर्य और स्वभाव; **गूढ़**—अत्यन्त गम्भीर; **करे**—करते हैं; **प्रकटन**—प्रकट।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु का एक अन्य गुण भी है। हे भक्तों, ध्यानपूर्वक सुनो कि वे किस तरह अपना ऐश्वर्य तथा गुण प्रकट करते हैं, यद्यपि वे अत्यधिक गूढ़ होते हैं।

সন্ন্যাসী পণ্ডিত-গণের করিতে গর্ব নাশ ।
নীচ-শূদ্র-দ্বারা করেন ধর্মের প্রকাশ ॥ ৮৪ ॥

সন্ন্যাসী পণ্ডিত-গণের করিতে গর্ব নাশ ।
নীচ-শূদ্র-দ্বারা করেন ধর্মের প্রকাশ ॥ ৮৪ ॥

सन्न्यासी—संन्यास आश्रम के लोग; **पण्डित-गणेर**—विद्वानों का; **करिते**—करने के लिए; **गर्व**—घमण्ड; **नाश**—विनष्ट; **नीच**—निम्न जाति के; **शूद्र**—चौथी श्रेणी के व्यक्ति; **द्वारा**—द्वारा; **करेन**—करते हैं; **धर्मेर प्रकाश**—वास्तविक धर्म के नियमों का प्रकाश।

अनुवाद

तथाकथित संन्यासियों एवं पण्डितों के मिथ्या अभिमान को नष्ट करने के लिए वे शूद्र या निम्न कुल के व्यक्ति द्वारा भी वास्तविक धर्म का प्रचार करते हैं।

तात्पर्य

जब कोई व्यक्ति *वेदान्त-सूत्र* में बड़ा विद्वान होता है, तो वह *पण्डित* कहलाता है। सामान्यतया यह योग्यता ब्राह्मणों तथा संन्यासियों में पाई जाती है। संन्यास तो ब्राह्मण के लिए, जो कि चारों वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र) में सर्वोच्च होता है, सर्वोपरि पद है। जनमत यह है कि ब्राह्मण कुल में उत्पन्न, संस्कारों द्वारा शुद्ध किया गया तथा गुरु से उचित रीति से दीक्षा-प्राप्त व्यक्ति वैदिक साहित्य का पण्डित होता है। जब ऐसे व्यक्ति को संन्यास दिया जाता है, तो वह सर्वोच्च पद पर स्थित होता है। ब्राह्मण को अन्य तीन वर्णों—क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र वर्णों—का गुरु माना जाता है और संन्यासी को तो उच्च ब्राह्मणों का भी गुरु माना जाता है।

सामान्यतया ब्राह्मणों तथा संन्यासियों को अपने आध्यात्मिक पद का बड़ा गर्व रहता है। इसीलिए उनके इस मिथ्या गर्व को विनष्ट करने के लिए श्री चैतन्य महाप्रभु ने रामानन्द राय के माध्यम से कृष्णभावनामृत का प्रचार किया, क्योंकि रामानन्द राय न तो संन्यासी थे, न ही ब्राह्मण कुल में उत्पन्न ब्राह्मण थे। वे तो शूद्र वर्ग के एक गृहस्थ थे; तो भी श्री चैतन्य महाप्रभु ने उनके गुरु बनने की व्यवस्था की और उन्होंने ब्राह्मण कुल में जन्मे अत्यन्त योग्य ब्राह्मण प्रद्युम्न मिश्र को शिक्षा दी। यहाँ तक कि संन्यासी होते हुए स्वयं महाप्रभु ने श्री रामानन्द राय से उपदेश लिया। इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने रामानन्द राय के माध्यम से अपना ऐश्वर्य प्रकट किया। इस घटना की यही विशेषता है।

श्री चैतन्य महाप्रभु का दर्शन है—*येइ कृष्णतत्त्ववेत्ता, सेइ 'गुरु' हय*—जो भी कृष्ण के विज्ञान को जानता है, वह गुरु बन सकता है चाहे वह संन्यासी

हो या न हो, ब्राह्मण हो या न हो। सामान्य लोग शास्त्र के सार को नहीं समझ सकते, न ही वे श्री चैतन्य महाप्रभु के सिद्धान्तों के दृढ़ अनुयायियों के चरित्र, व्यवहार तथा योग्यताओं को ही समझ सकते हैं। जो शूद्रों से भी नीच माने जाते हैं, कृष्णभावनामृत आन्दोलन ऐसे परिवारों में जन्मे लोगों से भी शुद्ध महान् वैष्णव तैयार कर रहा है। यह इसका प्रमाण है कि वैष्णव किसी भी परिवार में जन्म ले सकता है, जिसकी पुष्टि *श्रीमद्भागवत* (२.४.१८) में हुई है :

किरातहूणान्ध्रपुलिन्दपुल्कशा
आभीरशुम्भा यवनाः खसादयः।
येऽन्ये च पापा यदपाश्रयाश्रयाः
शुध्यन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः॥

"किरात, हूण, आन्ध्र, पुलिन्द, पुल्कश, आभीर, शुम्भ, यवन तथा खस एवं पापकर्मों में लगी अन्य जातियाँ तक भगवान् के भक्तों की शरण ग्रहण करके शुद्ध बन सकती हैं, क्योंकि भगवान् परम शक्तिमान हैं। मैं उन्हें सादर नमस्कार करता हूँ।" भगवान् विष्णु की कृपा से कोई भी व्यक्ति पूर्णतया शुद्ध, कृष्णभावनामृत का प्रचारक तथा अखिल विश्व का गुरु बन सकता है। यह सिद्धान्त समस्त वैदिक साहित्य में स्वीकार हुआ है। शास्त्रों से प्रमाण दिये जा सकते हैं कि किस तरह निम्न कुल में उत्पन्न व्यक्ति अखिल विश्व का गुरु बन सकता है। श्री चैतन्य महाप्रभु को सर्वाधिक वदान्य पुरुष माने जाते हैं, क्योंकि वे वैदिक शास्त्रों का सार ऐसे किसी भी व्यक्ति को वितरित करते हैं, जो उनका निष्ठावान सेवक बनने के कारण योग्य बन जाता है।

'ভক্তি', 'প্রেম', 'তত্ত্ব' কহে রায়ে করি' 'বক্তা'।
আপনি প্রদ্যুম্ন-মিশ্র-সহ হয় 'শ্রোতা'॥ ৮৫॥

'भक्ति', 'प्रेम', 'तत्त्व' कहे राये करि' 'वक्ता'।
आपनि प्रद्युम्न-मिश्र-सह हय 'श्रोता'॥ ८५॥

भक्ति—भक्तिमय सेवा; **प्रेम**—प्रेमभाव; **तत्त्व**—तथ्य; **कहे**—वे कहते हैं; **राये**—रामानन्द राय को; **करि'**—बनाकर; **वक्ता**—वक्ता; **आपनि**—स्वयं; **प्रद्युम्न-मिश्र**—प्रद्युम्न मिश्र; **सह**—साथ; **हय श्रोता**—श्रोता बन जाते हैं।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने निम्न कुलजन्मा गृहस्थ रामानन्द राय को वक्ता बनाकर भक्ति, प्रेम तथा परम सत्य के विषय में प्रचार किया। फिर स्वयं उच्च ब्राह्मण संन्यासी श्री चैतन्य महाप्रभु तथा शुद्ध ब्राह्मण प्रद्युम्न मिश्र—दोनों रामानन्द राय के श्रोता बने।

तात्पर्य

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर अपने *अमृत-प्रवाह-भाष्य* में कहते हैं कि शंकराचार्य सम्प्रदाय के संन्यासी सदैव यही सोचते हैं कि उन्होंने ब्राह्मण के समस्त कर्तव्य पूरे कर लिए हैं तथा *वेदान्त-सूत्र* का सार समझ लेने और संन्यासी बन जाने से वे सारे समाज के स्वयंभू गुरु हैं। इसी तरह ब्राह्मण कुलों में उत्पन्न हुए लोग सोचते हैं कि वेदों में वर्णित अनुष्ठान सम्पन्न करने के कारण तथा स्मृति के सिद्धान्तों का पालन करने के कारण केवल वे ही समाज के गुरु बन सकते हैं। ये उच्च ब्राह्मण सोचते हैं कि जब तक मनुष्य ब्राह्मण कुल में उत्पन्न न हो, तब तक वह गुरु नहीं बन सकता और परम सत्य की शिक्षा नहीं दे सकता। इन जात ब्राह्मणों तथा मायावादी संन्यासियों का गर्व चूर करने के लिए ही श्री चैतन्य महाप्रभु ने यह सिद्ध किया कि रामानन्द राय जैसा शूद्र कुल में उत्पन्न एवं गृहस्थ आश्रम में स्थित व्यक्ति स्वयं उनका तथा प्रद्युम्न मिश्र जैसे उच्च व्यक्तियों का गुरु बन सकता है। यह वैष्णव सम्प्रदाय का सिद्धान्त है, जिसका प्रमाण श्री चैतन्य महाप्रभु की शिक्षाओं में मिलता है। जो व्यक्ति यह जानता है कि क्या आध्यात्मिक है, क्या भौतिक है और कौन अध्यात्म पद पर दृढ़ता से स्थित है, वह *जगद्गुरु* बन सकता है। जगद्गुरु बनने के अनिवार्य नियमों को जाने बिना अपने आपको जगद्गुरु विज्ञापित करने से ही कोई जगद्गुरु नहीं बन सकता। यहाँ तक कि ऐसे लोग जिन्होंने यह कभी नहीं देखा कि जगद्गुरु क्या होता है और जो कभी किसी से बातें तक नहीं करते, वे गर्वित संन्यासी बन जाते हैं और अपने आपको जगद्गुरु कहने लगते हैं। श्री चैतन्य महाप्रभु को यह पसन्द नहीं था। जो भी व्यक्ति कृष्णतत्त्व को जानता हो और आध्यात्मिक जीवन के लिए पूर्णतया योग्य हो, वही जगद्गुरु बन सकता है।

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने स्वयं श्री रामानन्द राय से शिक्षा ली और उच्च ब्राह्मण प्रद्युम्न मिश्र को भी उनसे शिक्षा लेने के लिए उनके पास भेजा।

हरिदास-द्वारा नाम-माहात्म्य-प्रकाश ।
सनातन-द्वारा भक्ति-सिद्धान्त-विलास ॥ ८६॥

हरिदास-द्वारा नाम-माहात्म्य-प्रकाश ।
सनातन-द्वारा भक्ति-सिद्धान्त-विलास ॥ ८६ ॥

हरिदास-द्वारा—हरिदास ठाकुर द्वारा; **नाम-माहात्म्य**—हरे कृष्ण महामन्त्र के जप की महिमा; **प्रकाश**—प्रकट करवाते हैं; **सनातन-द्वारा**—सनातन गोस्वामी द्वारा; **भक्ति-सिद्धान्त-विलास**—भक्ति के सार का प्रसार।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने भगवान् के पवित्र नाम की महिमा हरिदास ठाकुर के माध्यम से प्रकट की, जो मुसलमान परिवार में उत्पन्न हुए थे। इसी तरह उन्होंने सनातन गोस्वामी के माध्यम से भक्ति का सार प्रकट किया, जो लगभग मुसलमान बनाये जा चुके थे।

श्री-रूप-द्वारा व्रजेर प्रेम-रस-लीला ।
के बुझिते पारे गम्भीर चैतन्येर खेला? ॥ ८७॥

श्री-रूप-द्वारा व्रजेर प्रेम-रस-लीला ।
के बुझिते पारे गम्भीर चैतन्येर खेला? ॥ ८७ ॥

श्री-रूप-द्वारा—श्री रूप गोस्वामी के माध्यम से; **व्रजेर**—वृन्दावन के; **प्रेम-रस-लीला**—प्रेमभाव और लीलाओं का वर्णन; **के**—कौन; **बुझिते पारे**—समझ सकता है; **गम्भीर**—गहन; **चैतन्येर खेला**—श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाएँ।

अनुवाद

महाप्रभु ने श्रील रूप गोस्वामी के माध्यम से वृन्दावन के प्रेम तथा उसकी दिव्य लीलाओं को भी प्रकट किया। इन सब पर विचार करने पर भला कौन ऐसा है, जो श्री चैतन्य महाप्रभु की गम्भीर योजनाओं को समझ सकता है?

শ্রী-চৈতন্য-লীলা এই——অমৃতের সিন্ধু ।
ত্রিজগত্ভাসাইতে পারে যার এক বিন্দু ॥ ৮৮॥

শ্রী-চৈতন্য-লীলা এই——অমৃতের সিন্ধু ।
ত্রিজগত্ ভাসাইতে পারে যার এক বিন্দু ॥ ৮৮॥

শ্রী-চৈতন্য-লীলা—শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু की दिव्य लीलाएँ; **এই**—ये; **অমৃতের সিন্ধু**—अमृत का समुद्र; **ত্রি-জগত্**—तीनों जगत्; **ভাসাইতে**—डुबाने के लिए; **পারে**—समर्थ हैं; **যার**—जिसकी; **এক বিন্দু**—एक बूँद।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के कार्यकलाप अमृत के सिन्धु के समान हैं। इस सिन्धु की एक बूँद भी तीनों लोकों को आप्लावित कर सकती है।

तात्पर्य

तीनों लोकों को अमृत से आप्लावित करना ही श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाओं का उद्देश्य है। इसे श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी तथा उसके बाद ठाकुर नरोत्तम दास तथा श्यामानन्द गोस्वामी ने दिखाया कि यह किस तरह सम्भव हो सकता है, क्योंकि इन सबने श्री चैतन्य महाप्रभु की कृपा का प्रतिनिधित्व किया। अब वही कृपा कृष्णभावनामृत आन्दोलन के माध्यम से सारे जगत् को आप्लावित कर रही है। वर्तमान कृष्णभावनामृत आन्दोलन श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा अपने काल में स्वयं सम्पन्न की हुई लीलाओं से अभिन्न है, क्योंकि उन्हीं सिद्धान्तों का पालन हो रहा है और वे ही कार्य अनवरत रूप से सम्पन्न किये जा रहे हैं।

চৈতন্য-চরিতামৃত নিত্য কর পান ।
যাহা হৈতে 'প্রেমানন্দ', 'ভক্তি-তত্ত্ব-জ্ঞান' ॥ ৮৯॥

চৈতন্য-চরিতামৃত নিত্য কর পান ।
যাহা হৈতে 'প্রেমানন্দ', 'ভক্তি-তত্ত্ব-জ্ঞান' ॥ ৮৯॥

চৈতন্য-চরিতামৃত—*चैतन्य चरितामृत* नामक इस दिव्य ग्रन्थ का; **নিত্য**—प्रतिदिन; **কর পান**—करो आस्वादन; **যাহা হৈতে**—जिसके द्वारा; **প্রেম-আনন্দ**—दिव्य आनन्द; **ভক্তি-তত্ত্ব-জ্ঞান**—भक्ति का दिव्य ज्ञान।

अनुवाद

हे भक्तों, श्री चैतन्य-चरितामृत तथा श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाओं के अमृत का नित्य ही पान करो, क्योंकि ऐसा करने से मनुष्य दिव्य आनन्द में डूब सकता है और भक्ति के पूर्ण ज्ञान को प्राप्त कर सकता है।

এই-মত মহাপ্রভু ভক্ত-গণ লঞা ।
নীলাচলে বিহরয়ে ভক্তি প্রচারিয়া ॥৯০॥

এइ-মত মহাপ্রভু ভক্ত-গণ লঞা ।
নীলাচলে বিহরয়ে ভক্তি প্রচারিয়া ॥ ৯০ ॥

এइ-মত—इस प्रकार; **মহাপ্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **ভক্ত-গণ লঞা**—अपने शुद्ध भक्तों के संग में; **নীলাচলে**—जगन्नाथ पुरी में; **বিহরয়ে**—दिव्य आनन्द लेते; **ভক্তি প্রচারিয়া**—भक्ति (प्रेममयी सेवा) का प्रचार करके।

अनुवाद

इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने संगियों, अपने शुद्ध भक्तों के साथ जगन्नाथ पुरी (नीलाचल) में नाना प्रकार से भक्ति सम्प्रदाय का प्रचार करते हुए दिव्य आनन्द का आस्वादन किया।

বঙ্গ-দেশী এক বিপ্র প্রভুর চরিতে ।
নাটক করি' লঞা আইল প্রভুকে শুনাইতে ॥৯১॥

বঙ্গ-দেশী এক বিপ্র প্রভুর চরিতে ।
নাটক করি' লঞা আইল প্রভুকে শুনাইতে ॥ ৯১ ॥

বঙ্গ-দেশী—बंगाल से; **এক বিপ্র**—एक ब्राह्मण; **প্রভুর চরিতে**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु के चरित्र के विषय में; **নাটক করি'**—एक नाटक लिखकर; **লঞা**—लेकर; **আইল**—आया; **প্রভুকে শুনাইতে**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु को सुनाने के लिए।

अनुवाद

बंगाल में रहने वाले एक ब्राह्मण ने श्री चैतन्य महाप्रभु के चरित्र के विषय में एक नाटक लिखा और उसकी पाण्डुलिपि लेकर महाप्रभु को सुनाने के लिए आया।

ভগবানাচার্য-সনে তার পরিচয় ।
তাঁরে মিলি' তাঁর ঘরে করিল আলয় ॥৯২॥

भगवानाचार्य्र-सने तार परिचय ।
ताँरे मिलि' ताँर घरे करिल आलय ॥ ९२॥

भगवान्-आचार्य्र—भगवान् आचार्य नामक श्री चैतन्य महाप्रभु का एक भक्त; **सने**—के साथ; **तार परिचय**—उसका परिचय; **ताँरे मिलि'**—उनसे मिलकर; **ताँर घरे**—उनके घर पर; **करिल आलय**—निवास किया।

अनुवाद

यह ब्राह्मण श्री चैतन्य महाप्रभु के एक भक्त भगवान् आचार्य का परिचित था। अतएव जगन्नाथ पुरी में उनसे मिलने के बाद वह ब्राह्मण भगवान् आचार्य के घर में रहने लगा।

প্রথমে নাটক তেঁহো তাঁরে শুনাইল ।
তাঁর সঙ্গে অনেক বৈষ্ণব নাটক শুনিল ॥৯৩॥

प्रथमे नाटक तेंहो ताँरे शुनाइल ।
ताँर सङ्गे अनेक वैष्णव नाटक शुनिल ॥ ९३॥

प्रथमे—सर्व प्रथम; **नाटक**—नाटक; **तेंहो**—उसने; **ताँरे**—उन्हें; **शुनाइल**—सुनाया; **ताँर सङ्गे**—उनके साथ; **अनेक**—अनेक; **वैष्णव**—वैष्णवों ने; **नाटक शुनिल**—नाटक सुना।

अनुवाद

पहले तो उस ब्राह्मण ने भगवान् आचार्य को वह नाटक सुनाया और तब अनेक भक्तों ने भगवान् आचार्य के साथ उसे सुना।

সবেই প্রশংসে নাটক 'পরম উত্তম' ।
মহাপ্রভুরে শুনাইতে সবার হৈল মন ॥৯৪॥

सबेइ प्रशंसे नाटक 'परम उत्तम' ।
महाप्रभुरे शुनाइते सबार हैल मन ॥ ९४॥

सबेइ—सभी ने; **प्रशंसे**—प्रशंसा की; **नाटक**—नाटक की; **परम उत्तम**—"बहुत अच्छा, बहुत अच्छा"; **महाप्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **शुनाइते**—सुनाने का; **सबार**—सबका; **हैल**—हो गया; **मन**—मन।

अनुवाद

सारे वैष्णवों ने यह कहकर नाटक की प्रशंसा की कि यह बहुत ही अच्छा है। उन्होंने यह भी इच्छा व्यक्त की कि श्री चैतन्य महाप्रभु भी यह नाटक सुनें।

गीत, श्लोक, ग्रन्थ, कवित्व——येई करि' आने ।
प्रथमे शुनाय सेई स्वरूपेर स्थाने ॥९५॥
गीत, श्लोक, ग्रन्थ, कवित्व——येइ करि' आने ।
प्रथमे शुनाय सेइ स्वरूपेर स्थाने ॥ ९५ ॥

गीत—गीत; **श्लोक**—श्लोक; **ग्रन्थ**—ग्रन्थ; **कवित्व**—कविता; **येइ**—जो कोई भी; **करि'**—बनाकर; **आने**—लाता; **प्रथमे**—पहले; **शुनाय**—सुनाता; **सेइ**—वह व्यक्ति; **स्वरूपेर स्थाने**—स्वरूप दामोदर गोस्वामी के सामने।

अनुवाद

यह प्रथा थी कि जो कोई भी श्री चैतन्य महाप्रभु के विषय में कोई गीत, श्लोक, ग्रन्थ या कविता लिखता, तो सुनाने के लिए उसे सर्वप्रथम स्वरूप दामोदर गोस्वामी के पास लाना पड़ता।

स्वरूप-ठाञि उत्तरे यदि, लञा, ताँर मन ।
तबे महाप्रभु-ठाञि करायं श्रवण ॥९६॥
स्वरूप-ठाञि उत्तरे यदि, लञा, ताँर मन ।
तबे महाप्रभु-ठाञि कराय श्रवण ॥ ९६ ॥

स्वरूप-ठाञि—स्वरूप दामोदर गोस्वामी के समक्ष; **उत्तरे**—उत्तीर्ण; **यदि**—यदि कोई; **लञा**—लेकर; **ताँर मन**—उनका मन; **तबे**—उसके बाद; **महाप्रभु-ठाञि**—श्री चैतन्य महाप्रभु के सामने; **कराय श्रवण**—सुनवाते।

अनुवाद

यदि स्वरूप गोस्वामी हाँ कर देते, तो वह श्री चैतन्य महाप्रभु को सुनने के लिए प्रस्तुत किया जाता।

'रसाभास' हय यदि 'सिद्धान्त-विरोध' ।
सहिते ना पारे प्रभु, मने हय क्रोध ॥ ९७ ॥

'रसाभास' हय यदि 'सिद्धान्त-विरोध' ।
सहिते ना पारे प्रभु, मने हय क्रोध ॥ ९७ ॥

रस-आभास—रसाभास; **हय**—हो जाता; **यदि**—यदि; **सिद्धान्त-विरोध**—भक्ति के सिद्धान्तों के विरुद्ध; **सहिते ना पारे**—सहन नहीं कर सकते; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **मने**—मन में; **हय**—होते; **क्रोध**—गुस्सा।

अनुवाद

यदि इसका संकेत होता कि दिव्य रसों की व्याप्ति इस तरह हुई है, जो भक्ति सिद्धान्त के विरुद्ध हैं, तो श्री चैतन्य महाप्रभु इसे सहन नहीं कर पाते थे और अत्यन्त क्रुद्ध होते थे।

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने *रसाभास* की निम्नलिखित परिभाषा *भक्तिरसामृतसिन्धु* (*उत्तर-विभाग, नवम तरंग* १-३, ३३, ३८ तथा ४१) से दी है :

पूर्वमेवानुशिष्टेन विकला रसलक्षणा।
रसा एव रसाभासा रसज्ञैरनुकीर्तिताः ॥
स्युस्त्रिधोपरसाश्चानुरसाश्चापरसाश्च ते।
उत्तमा मध्यमाः प्रोक्ताः कनिष्ठाश्चेत्यमी क्रमात् ॥
प्राप्तैः स्थायिविभावानुभावाद्यैस्तु विरूपताम्।
शान्तादयो रसा एव द्वादशोपरसा मताः ॥
भक्तादिभिर्विभावाद्यैः कृष्णसम्बन्धवर्जितैः।
रसा हास्यादयः सप्त शान्तश्चानुरसा मताः ॥
कृष्णतत्प्रतिपक्षश्चेद् विषयाश्रयतां गताः।
हासादीनां तदा तेऽत्र प्राज्ञैरपरसा मताः ॥
भावाः सर्वे तदाभासा रसाभासाश्च केचन।
अमी प्रोक्त रसाभिज्ञैः सर्वेऽपि रसनाद् रसाः ॥

"जो रस क्षणिक रूप से दिव्य प्रतीत हो, किन्तु पहले बताये गये रसों का विरोध करे तथा रस की कुछ शर्तों को पूरा न करे वह उच्च भक्तों द्वारा, जो दिव्य रसों का आस्वादन करना जानते हैं, रसाभास या रसों का अतिक्रमण कहा जाता है। ऐसे रस *उपरस* (गौण रस), *अनुरस* (दिव्य रस की नकल) तथा *अपरस* (विरोधाभासी दिव्य रस) कहलाते हैं। इस तरह रसाभास अर्थात् रस की व्याप्ति को प्रथम, द्वितीय या तृतीय कोटि का बतलाया जाता है। जब बारह रसों को—यथा शान्त, दास्य तथा सख्य रसों को विरोधी स्थायी भाव, विभाव तथा अनुभाव द्वारा लक्षित किया जाता है, तब वे *उपरस* कहलाते हैं। जब सात दिव्य गौण रस तथा शुष्क शान्त रस कृष्ण और प्रेमभक्ति से सम्बन्ध न रखने वाले भक्तों तथा भावों द्वारा उत्पन्न होते हैं, तो वे *अनुरस* कहलाते हैं। यदि कृष्ण तथा उनसे विरोध रखने वाले शत्रु हास्य रस के लक्ष्य तथा आगार बनते हैं, तो इस तरह से उत्पन्न भाव *अपरस* कहलाते हैं। कभी-कभी दक्ष लोग एक रस से दूसरे का अन्तर करते समय कुछ *रसाभासों* को आनन्ददायक तथा आस्वादयुक्त होने के कारण *रस* मान बैठते हैं।" श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर कहते हैं, *परस्परवैरयोर्यदि योगस्तदा रसाभास:*—"जब दो विरोधी दिव्य रसों का अतिक्रमण होता है, तो वे रसाभास उत्पन्न करते हैं।"

অতএব প্রভু কিছু আগে নাহি শুনে ।
এই মর্যাদা প্রভু করিয়াছে নিয়মে ॥৯৮॥

অতএব প্রভু কিছু আগে নাহি শুনে ।
এই মর্য্যাদা প্রভু করিয়াছে নিয়মে ॥ ৯৮ ॥

অতএব—অत:; **প্রভু**—শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু; **কিছু**—কুছ ভী; **আগে**—পহলে; **নাহি শুনে**—নহীं সুনতে; **এই মর্য্যাদা**—যহ মর্যাদা; **প্রভু**—শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু নে; **করিয়াছে নিয়মে**—এক নিয়ম বনা দিয়া।

অনুবাদ

इसलिए जब तक स्वरूप दामोदर पहले सुन न लें, तब तक श्री चैतन्य महाप्रभु उसे नहीं सुनते। महाप्रभु ने इस शिष्टाचार या मर्यादा को नियम बना दिया था।

স্বরূপের ঠাঞি আচার্য কৈলা নিবেদন ।
এক বিপ্র প্রভুর নাটক করিয়াছে উত্তম ॥ ৯৯ ॥

স্বরূপের ঠাঞি আচার্য্য কৈলা নিবেদন ।
এক বিপ্র প্রভুর নাটক করিয়াছে উত্তম ॥ ৯৯ ॥

স্বরূপের ঠাঞি—স्वरूप दामोदर के सामने; **আচার্য্য**—भगवान् आचार्य ने; **কৈলা**—की; **নিবেদন**—विनति; **এক বিপ্র**—एक ब्राह्मण ने; **প্রভুর**—श्री चैतन्य महाप्रभु पर; **নাটক**—नाटक; **করিয়াছে**—रचा है; **উত্তম**—अति उत्तम।

अनुवाद

भगवान् आचार्य ने स्वरूप दामोदर गोस्वामी से निवेदन किया, "एक उत्तम ब्राह्मण ने श्री चैतन्य महाप्रभु के विषय में एक नाटक प्रस्तुत किया है, जो अत्युत्तम रीति से लिखा हुआ प्रतीत होता है।

আদৌ তুমি শুন, যদি তোমার মন মানে ।
পাছে মহাপ্রভুরে তবে করাইমু শ্রবণে ॥ ১০০ ॥

আদৌ তুমি শুন, যদি তোমার মন মানে ।
পাছে মহাপ্রভুরে তবে করাইমু শ্রবণে ॥ ১০০ ॥

আদৌ—प्रथम; **তুমি**—आप; **শুন**—सुनिये; **যদি**—यदि; **তোমার মন মানে**—आप स्वीकार करें; **পাছে**—बाद में; **মহাপ্রভুরে**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **তবে**—तब; **করাইমু শ্রবণে**—मैं सुनने का निवेदन करूँगा।

अनुवाद

"पहले आप सुन लें और यदि आपका मन इसे स्वीकार करे, तो मैं श्री चैतन्य महाप्रभु से इसे सुनने के लिए प्रार्थना करूँ।"

স্বরূপ কহে,—"তুমি 'গোপ' পরম-উদার ।
যে-সে শাস্ত্র শুনিতে ইচ্ছা উপজে তোমার ॥ ১০১ ॥

স্বরূপ কহে,—"তুমি 'গোপ' পরম-উদার ।
যে-সে শাস্ত্র শুনিতে ইচ্ছা উপজে তোমার ॥ ১০১ ॥

স্বরূপ কহে—स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने कहा; **তুমি**—तुम; **গোপ**—ग्वाल बाल; **পরম-**

उदार—अत्यन्त उदार; **ग्रे-से शास्त्र**—कुछ भी शास्त्र के रूप में लिखित; **शुनिते**—सुनने की; **इच्छा**—इच्छा; **उपजे**—जागृत हो जाती है; **तोमार**—तुम्हारी।

अनुवाद

स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने उत्तर दिया, "हे भगवान् आचार्य, तुम अत्यन्त उदार ग्वाले हो। कभी-कभी तुम्हारे भीतर किसी भी प्रकार की कविता को सुनने की इच्छा जागृत हो जाती है।

'यद्वा-तद्वा' कविर वाक्ये हय 'रसाभास' ।
सिद्धान्त-विरुद्ध शुनिते ना हय उल्लास ॥१०२॥

'यद्वा-तद्वा' कविर वाक्ये हय 'रसाभास' ।
सिद्धान्त-विरुद्ध शुनिते ना हय उल्लास ॥१०२॥

यद्वा-तद्वा कविर—किसी भी तथाकथित कवि के; **वाक्ये**—वाक्यों में; **हय**—होता है; **रस-आभास**—दिव्य रसों का अतिक्रमण; **सिद्धान्त-विरुद्ध**—सैद्धान्तिक निष्कर्षों के विरुद्ध; **शुनिते**—सुनने पर; **ना**—नहीं; **हय**—होता; **उल्लास**—आनन्द।

अनुवाद

"तथाकथित कवियों की रचनाओं में सामान्यतया दिव्य रसों का अतिक्रमण (रसाभास) की सम्भावना रहती है। इस तरह जब रस सिद्धान्तों के विरुद्ध हो जाते हैं, तो ऐसी कविता को सुनना कोई भी पसन्द नहीं करता।

तात्पर्य

यद्वा-तद्वा कवि उसका सूचक है, जो बिना ज्ञान के काव्य रचना करता है। काव्य रचना और वह भी वैष्णव सिद्धान्त से सम्बन्धित काव्य की रचना अत्यन्त कठिन है। यदि बिना उचित ज्ञान के काव्य रचना की जाती है, तो रसों का अतिक्रमण की पूरी सम्भावना रहती है। जब ऐसा होता है, तो कोई भी विद्वान या उच्च वैष्णव उसे सुनना पसन्द नहीं करेंगे।

'रस', 'रसाभास' यार नाहिक विचार ।
भक्ति-सिद्धान्त-सिन्धु नाहि पाय पार ॥१०३॥

'रस', 'रसाभास' ग्रार नाहिक विचार ।
भक्ति-सिद्धान्त-सिन्धु नाहि पाय पार ॥ १०३ ॥

रस—दिव्य रस; **रस-आभास**—दिव्य रसों का अतिक्रमण; **ग्रार**—जिसको; **नाहिक विचार**—कोई विचार नहीं है; **भक्ति-सिद्धान्त-सिन्धु**—भक्ति के सिद्धान्तों का समुद्र; **नाहि**—नहीं; **पाय**—प्राप्त करता; **पार**—सीमा।

अनुवाद

"जिस कवि को दिव्य रसों का तथा उनके अतिक्रमण का ज्ञान नहीं होता, वह भक्ति के सिद्धान्त रूपी सागर को पार नहीं कर सकता।

'व्याकरण' नाहि जाने, ना जाने 'अलङ्कार' ।
'नाटकालङ्कार'-ज्ञान नाहिक याहार ॥ १०४ ॥
कृष्ण-लीला वर्णिते ना जाने सेई छार! ।
विशेषे दुर्गम एई चैतन्य-विहार ॥ १०५ ॥

'व्याकरण' नाहि जाने, ना जाने 'अलङ्कार' ।
'नाटकालङ्कार'-ज्ञान नाहिक ग्राहार ॥ १०४ ॥
कृष्ण-लीला वर्णिते ना जाने सेइ छार! ।
विशेषे दुर्गम एइ चैतन्य-विहार ॥ १०५ ॥

व्याकरण—व्याकरण; **नाहि जाने**—नहीं जानता; **ना जाने**—नहीं जानता; **अलङ्कार**—अलंकार; **नाटक-अलङ्कार**—नाटक के अलंकारों का; **ज्ञान**—ज्ञान; **नाहिक**—नहीं है; **ग्राहार**—जिसको; **कृष्ण-लीला**—भगवान् कृष्ण की लीलाएँ; **वर्णिते**—वर्णन करना; **ना जाने**—नहीं जानता; **सेइ**—वह; **छार**—पतित; **विशेषे**—विशेष रूप से; **दुर्गम**—अत्यन्त कठिन; **एइ**—ये; **चैतन्य-विहार**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाएँ।

अनुवाद

"जो कवि व्याकरण के नियमों को नहीं जानता, जो अलंकारों, विशेषतया नाटक में प्रयुक्त अलंकारों को नहीं जानता और जो यह नहीं जानता कि श्रीकृष्ण की लीलाओं को किस तरह प्रस्तुत किया जाए, उसे धिक्कार है। इतना ही नहीं, श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाएँ समझने में विशेष रूप से कठिन हैं।

कृष्ण-लीला, गौर-लीला से करे वर्णन ।
गौर-पाद-पद्म याँर हय प्राण-धन ॥ १०६॥

कृष्ण-लीला, गौर-लीला से करे वर्णन ।
गौर-पाद-पद्म याँर हय प्राण-धन ॥ १०६॥

कृष्ण-लीला—भगवान् कृष्ण की लीलाएँ; **गौर-लीला**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाएँ; **से**—वह; **करे वर्णन**—वर्णन करता है; **गौर-पाद-पद्म**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमल; **याँर**—जिसके; **हय**—हैं; **प्राण-धन**—जीवन (प्राण) और आत्मा ।

अनुवाद

"जिसने श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों को अपने प्राण-धन के रूप में स्वीकार कर लिया है, वही भगवान् कृष्ण या श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाओं का वर्णन कर सकता है।

ग्राम्य-कविर कविञ शुनिते हय 'दुःख' ।
विदग्ध-आत्मीय-वाक्य शुनिते हय 'सुख' ॥ १०७॥

ग्राम्य-कविर कवित्व शुनिते हय 'दुःख' ।
विदग्ध-आत्मीय-वाक्य शुनिते हय 'सुख' ॥ १०७॥

ग्राम्य-कविर—पुरुष और स्त्री सम्बन्धी कविताएँ लिखने वाले कवि की; **कवित्व**—कविता; **शुनिते**—सुनने से; **हय**—होता है; **दुःख**—दुःख; **विदग्ध-आत्मीय**—प्रेमभाव में पूर्णतया निमग्न भक्त के; **वाक्य**—वचन; **शुनिते**—सुनकर; **हय**—होता है; **सुख**—आनन्द।

अनुवाद

"जिस व्यक्ति को दिव्य ज्ञान नहीं है और जो पुरुष तथा स्त्री के पारस्परिक सम्बन्धों के विषय में लिखता है, उसकी कविता सुनकर केवल दुःख होता है; जबकि प्रेम में डूबे भक्त के शब्दों को सुनकर परम सुख उत्पन्न होता है।

तात्पर्य

ग्राम्य-कवि द्योतक है ऐसे कवि या लेखक का, जो स्त्री तथा पुरुष के सम्बन्धों के विषय में उपन्यास लिखते हैं। किन्तु *विदग्ध-आत्मीय-वाक्य* द्योतक है उस भक्त द्वारा लिखे गये शब्दों का, जो शुद्ध भक्ति को भलीभाँति

समझता है। ऐसे भक्त जो परम्परा पद्धति का पालन करते हैं, वे *सजातीयाशय-स्निग्ध* कहलाते हैं—अर्थात् वे अपने ही जैसे लोगों को अच्छे लगने वाले हैं। भक्तगण ऐसे ही काव्य तथा अन्य रचनाओं को अत्यन्त सुखपूर्वक स्वीकार करते हैं।

রূপ যৈছে দুই নাটক করিয়াছে আরম্ভে ।
শুনিতে আনন্দ বাড়ে যার মুখ-বন্ধে'' ॥১০৮॥

রূপ য়ৈছে দুই নাটক করিয়াছে আরম্ভে ।
শুনিতে আনন্দ বাড়ে য়ার মুখ-বন্ধে" ॥ ১০৮ ॥

রূপ—रूप गोस्वामी ने; **য়ৈছে**—जैसे; **দুই**—दो; **নাটক**—नाटक; **করিয়াছে আরম্ভে**—रचे हैं; **শুনিতে**—सुनकर; **আনন্দ বাড়ে**—दिव्य आनन्द बढ़ जाता है; **য়ার**—जिसका; **মুখ-বন্ধে**—मात्र आमुख भाग सुनकर ही।

अनुवाद

"रूप गोस्वामी ने नाटक रचना का मानक स्थापित किया है। यदि भक्तगण उनके दो नाटकों के आमुख अंशों को सुनते हैं, तो उनसे उनके आनन्द में वृद्धि होती है।"

ভগবানাচার্য কহে,—'শুন এক-বার ।
তুমি শুনিলে ভাল-মন্দ জানিবে বিচার' ॥১০৯॥

ভগবানাচার্য্য কহে,—'শুন এক-বার ।
তুমি শুনিলে ভাল-মন্দ জানিবে বিচার' ॥ ১০৯ ॥

ভগবান্-আচার্য্য—भगवान् आचार्य; **কহে**—कहते हैं; **শুন**—कृपया सुनिये; **এক-বার**—एक बार; **তুমি শুনিলে**—यदि आप सुनते हैं; **ভাল-মন্দ**—अच्छा या बुरा; **জানিবে বিচার**—समझ पायेंगे।

अनुवाद

स्वरूप दामोदर द्वारा इस तरह समझाने के बाद भी भगवान् आचार्य ने अनुरोध किया, "कृपया एक बार तो यह नाटक सुन लीजिये। यदि आप सुनेंगे, तो विचार कर सकेंगे कि यह अच्छा है या बुरा।"

দুই তিন দিন আচার্য আগ্রহ করিল ।
তাঁর আগ্রহে স্বরূপের শুনিতে ইচ্ছা হইল ॥১১০॥

दुइ तिन दिन आचार्य आग्रह करिल ।
ताँर आग्रहे स्वरूपेर शुनिते इच्छा हइल ॥ ११० ॥

दुइ तिन दिन—दो या तीन दिन तक; **आचार्य**—भगवान् आचार्य ने; **आग्रह करिल**—अपनी तीव्र इच्छा व्यक्त की; **ताँर आग्रहे**—उनकी उत्सुकता द्वारा; **स्वरूपेर**—स्वरूप दामोदर की; **शुनिते**—सुनने की; **इच्छा**—इच्छा; **हइल**—हो गई।

अनुवाद

भगवान् आचार्य ने लगातार दो-तीन दिनों तक स्वरूप दामोदर गोस्वामी से काव्य सुनने के लिए आग्रह किया। उनके बारम्बार अनुरोधों से स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने बंगाल के ब्राह्मण द्वारा रचित काव्य को सुनने की इच्छा व्यक्त की।

সবা লঞা স্বরূপ গোসাঞি শুনিতে বসিলা ।
তবে সেই কবি নান্দী-শ্লোক পড়িলা ॥১১১॥

सबा लञा स्वरूप गोसाञि शुनिते वसिला ।
तबे सेइ कवि नान्दी-श्लोक पड़िला ॥ १११ ॥

सबा लञा—अन्य भक्तों के संग में; **स्वरूप गोसाञि**—स्वरूप दामोदर गोस्वामी; **शुनिते वसिला**—सुनने के लिए बैठ गये; **तबे**—तब; **सेइ कवि**—उस कवि ने; **नान्दी-श्लोक**—नान्दी श्लोक; **पड़िला**—पढ़ा।

अनुवाद

स्वरूप दामोदर गोस्वामी काव्य सुनने के लिए अन्य भक्तों के साथ बैठ गये और तब कवि ने परिचयात्मक श्लोक (नान्दी श्लोक) पढ़ना प्रारम्भ किया।

বিকচ-কমল-নেত্রে শ্রী-জগন্নাথ-সংজ্ঞে
কনক-রুচিরিহাত্মন্যাত্মতাং যঃ প্রপন্নঃ ।
প্রকৃতি-জড়মশেষং চেতয়ন্নাবিরাসীৎ
স দিশতু তব ভব্যং কৃষ্ণ-চৈতন্য-দেবঃ ॥১১২॥

विकच-कमल-नेत्रे श्री-जगन्नाथ-संज्ञे
कनक-रुचिरिहात्मन्यात्मतां यः प्रपन्नः ।
प्रकृति-जड़मशेषं चेतयन्नाविरासीत्
स दिशतु तव भव्यं कृष्ण-चैतन्य-देवः ॥ ११२ ॥

विकच—विस्तृत; **कमल-नेत्रे**—जिसके कमलनयन; **श्री-जगन्नाथ-संज्ञे**—श्री जगन्नाथ नामक; **कनक-रुचिः**—स्वर्णिम कान्ति युक्त; **इह**—यहाँ जगन्नाथ पुरी में; **आत्मनि**—शरीर में; **आत्मताम्**—आत्मत्व; **यः**—जिन्होंने; **प्रपन्नः**—प्राप्त कर ली है; **प्रकृति**—प्रकृति; **जड़म्**—जड़; **अशेषम्**—असीमित; **चेतयन्**—जगाते हुए; **आविरासीत्**—प्रकट हुए हैं; **सः**—वे; **दिशतु**—वर्षा करें; **तव**—आप पर; **भव्यम्**—कृपा, सौभाग्य; **कृष्ण-चैतन्य-देवः**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु।

अनुवाद

"पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् ने सुनहरा वर्ण धारण कर लिया है और जगन्नाथ नामक शरीर के आत्मा बन गये हैं, जिनके विकसित कमलनेत्र अतीव विस्तृत हैं। इस तरह वे जगन्नाथ पुरी में प्रकट हुए हैं और उन्हों ने जड़ पदार्थ को चेतन बना दिया है। वे श्रीकृष्ण चैतन्यदेव तुम सबको सौभाग्य प्रदान करें।"

श्लोक शुनि' सर्व-लोक ताहारे बाखाने ।
स्वरूप कहे,—'एइ श्लोक करह व्याख्याने' ॥ ११३ ॥

श्लोक शुनि'—श्लोक सुनकर; **सर्व-लोक**—सभी ने; **ताहारे**—उसकी; **बाखाने**—प्रशंसा की; **स्वरूप कहे**—स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने कहा; **एइ श्लोक**—इस श्लोक का; **करह व्याख्याने**—कृपया वर्णन करो।

अनुवाद

जब उपस्थित लोगों ने यह श्लोक सुना, तो सबने कवि की प्रशंसा की, किन्तु स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने उससे अनुरोध किया कि, "कृपया इस श्लोक की व्याख्या करें।"

কবি কহে,—'জগন্নাথ—সুন্দর-শরীর ।
চৈতন্য-গোসাঞি—শরীরী মহা-ধীর ॥ ১১৪॥

কবি কহে,—'জগন্নাথ—সুন্দর-শরীর ।
চৈতন্য-গোসাঞি—শরীরী মহা-ধীর ॥ ১১৪॥

कवि कहे—कवि ने कहा; **जगन्नाथ**—भगवान् जगन्नाथ; **सुन्दर-शरीर**—अत्यन्त सुन्दर शरीर; **चैतन्य-गोसाञि**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **शरीरी**—आत्मा; **महा-धीर**—अत्यन्त धीर।

अनुवाद

कवि ने कहा, "जगन्नाथजी अत्यन्त सुन्दर शरीर हैं और श्री चैतन्य महाप्रभु जो कि अत्यन्त धीर हैं, उस शरीर के स्वामी हैं।

तात्पर्य

शरीरी उस व्यक्ति का द्योतक है, जो उस शरीर का मालिक है। *भगवद्गीता* (२.१३) में कहा गया है :

देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति॥

"जिस तरह शरीरधारी आत्मा इस शरीर में बाल्यावस्था से तरुणावस्था में और फिर वृद्धावस्था में निरन्तर अग्रसर होता रहता है, उसी प्रकार मृत्यु होने पर आत्मा दूसरे शरीर में चला जाता है। धीर व्यक्ति ऐसे परिवर्तन से मोहग्रस्त नहीं होता।" संसार के सामान्य जीव के लिए शरीर तथा शरीर के स्वामी में अन्तर या भेद होता है। किन्तु आध्यात्मिक जगत् में ऐसा अन्तर नहीं है, क्योंकि शरीर स्वयं स्वामी है और स्वामी ही शरीर है। आध्यात्मिक जगत् में हर वस्तु को आध्यात्मिक होना चाहिए। अतएव शरीर तथा शरीरी में कोई अन्तर नहीं है।

সহজে জড়-জগতের চেতন করাইতে ।
নীলাচলে মহাপ্রভু হৈলা আবির্ভূতে ॥ ১১৫॥

সহজে জড়-জগতের চেতন করাইতে ।
নীলাচলে মহাপ্রভু হৈলা আবির্ভূতে ॥ ১১৫॥

सहजे—स्वाभाविक रूप से; **जड़-जगतेर**—जड़ भौतिक जगत् को; **चेतन कराइते**—

आध्यात्मिक चेतना दिलाने के लिए; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी में; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **हैला आविर्भूते**—प्रकट हुए हैं।

अनुवाद

"श्री चैतन्य महाप्रभु यहाँ नीलाचल (जगन्नाथ पुरी) में सम्पूर्ण जड़ भौतिक जगत् को आध्यात्मिक बनाने के लिए प्रकट हुए हैं।"

শুনিয়া সবার হৈল আনন্দিত-মন ।
দুঃখ পাঞা স্বরূপ কহে সক্রোধ বচন ॥১১৬॥

শুনিয়া সবার হৈল আনন্দিত-মন ।
দুঃখ পাঞা স্বরূপ কহে সক্রোধ বচন ॥ ১১৬॥

शुनिया—सुनकर; **सबार**—सभी को; **हैल**—हुआ; **आनन्दित-मन**—मन में अति आनन्द; **दुःख पाञा**—दुःखी होकर; **स्वरूप कहे**—स्वरूप दामोदर ने कहना प्रारम्भ किया; **स-क्रोध वचन**—क्रुद्ध वचनों के साथ।

अनुवाद

यह सुनकर वहाँ पर उपस्थित सारे लोग अत्यन्त प्रसन्न थे। किन्तु स्वरूप दामोदर, जो कि अकेले ही अत्यन्त दुःखी थे, अत्यन्त क्रोध से बोले।

''আরে মূর্খ, আপনার কৈলি সর্ব-নাশ! ।
দুই ত' ঈশ্বরে তোর নাহিক বিশ্বাস ॥১১৭॥

"आरे मूर्ख, आपनार कैलि सर्व-नाश! ।
दुइ त' ईश्वरे तोर नाहिक विश्वास ॥ ११७॥

आरे मूर्ख—हे मूर्ख; **आपनार**—अपना; **कैलि**—तुमने किया है; **सर्व-नाश**—सब सौभाग्य का नाश; **दुइ त' ईश्वरे**—दोनों भगवान् में; **तोर**—तुम्हारा; **नाहिक विश्वास**—विश्वास नहीं है।

अनुवाद

उन्होंने कहा, "तुम मूर्ख हो। तुमने अपने सर्वनाश को अपने आप बुलाया है, क्योंकि तुम्हें न तो दो भगवानों—जगन्नाथ तथा श्री चैतन्य महाप्रभु—का ज्ञान है, न ही उनमें तुम्हारी श्रद्धा है।

पूर्णानन्द-चिज्स्वरूप जगन्नाथ-राय ।
তাঁরে কৈলি জড়-নশ্বর-প্রাকৃত-কায়!! ॥১১৮॥

पूर्णानन्द-चित्स्वरूप जगन्नाथ-राय ।
ताँरे कैलि जड़-नश्वर-प्राकृत-काय!! ॥ ११८ ॥

पूर्ण-आनन्द—सम्पूर्ण दिव्य आनन्द; **चित्-स्वरूप**—आध्यात्मिक स्वरूप; **जगन्नाथ-राय**—भगवान् जगन्नाथ; **ताँरे**—उनको; **कैलि**—तुमने बना दिया; **जड़**—जड़; **नश्वर**—नाशवान; **प्राकृत**—भौतिक; **काय**—शरीरधारी।

अनुवाद

"भगवान् जगन्नाथ सम्पूर्ण आध्यात्मिक हैं और दिव्य आनन्द से परिपूर्ण हैं, किन्तु तुमने उनकी तुलना जड़ नाशवान शरीर से की है, जो भगवान् की निष्क्रिय बहिरंगा शक्ति से बना है।

तात्पर्य

यदि कोई यह सोचता है कि भगवान् जगन्नाथ का स्वरूप काष्ठनिर्मित मूर्ति है, तो वह अपने लिए तुरन्त ही दुर्भाग्य को बुलावा देता है। *पद्म पुराण* के अनुसार—*अर्च्ये विष्णौ शिलाधीः...यस्य वा नारकी सः।* "जो मन्दिर के अर्चाविग्रह को पत्थर या काष्ठ का बना मानता है, वह नरक का निवासी है।" इस तरह जो व्यक्ति यह सोचता है कि भगवान् जगन्नाथ का शरीर पदार्थ का बना है और जो भगवान् जगन्नाथ के शरीर तथा आत्मा में अन्तर करता है, उसे धिक्कार है, क्योंकि वह अपराधी है। वह शुद्ध भक्त, जो कृष्णभावना के विज्ञान को जानता है, वह भगवान् जगन्नाथ तथा उनके शरीर में अन्तर नहीं करता। वह जानता है कि वे अभिन्न हैं, ठीक वैसे ही जैसे कि भगवान् कृष्ण तथा उनका आत्मा एक हैं। जब मनुष्य के नेत्र आध्यात्मिक पद पर सम्पादित भक्ति द्वारा शुद्ध हो जाते हैं, तब वह भगवान् जगन्नाथ तथा उनके शरीर को वास्तव में पूर्ण आध्यात्मिक रूप में देख सकता है। इसलिए उन्नत भक्त पूज्य आराध्य श्रीविग्रह को सामान्य व्यक्ति की तरह शरीर के भीतर आत्मा से युक्त नहीं मानता। भगवान् जगन्नाथ के शरीर और आत्मा में कोई अन्तर नहीं है, क्योंकि भगवान् जगन्नाथ *सच्चिदानन्द विग्रह* हैं, ठीक उसी तरह जैसे कि कृष्ण का शरीर *सच्चिदानन्द विग्रह* है। वस्तुतः भगवान् जगन्नाथ तथा श्री चैतन्य महाप्रभु में कोई

अन्तर नहीं है, किन्तु बंगाल के अज्ञानी कवि ने भगवान् श्री जगन्नाथ के शरीर के लिए भौतिक अन्तर का प्रयोग किया।

पूर्ण-षड्-ऐश्वर्य चैतन्य——स्वयं भगवान् ।
ताँरे कैलि क्षुद्र जीव स्फुलिङ्ग-समान!! ॥११९॥

पूर्ण—सम्पूर्ण; **षट्-ऐश्वर्य**—छः ऐश्वर्यों से युक्त; **चैतन्य**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु; **स्वयम्**—स्वयं; **भगवान्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **ताँरे**—उनको; **कैलि**—तुमने बना दिया; **क्षुद्र जीव**—एक सामान्य जीवात्मा; **स्फुलिङ्ग-समान**—अंश के समान।

अनुवाद

"तुमने श्री चैतन्य महाप्रभु को, जो कि छः ऐश्वर्यों से युक्त पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं, सामान्य जीव के स्तर का कहा है। उन्हें परम अग्नि के रूप में न जानकर तुमने उन्हें एक स्फुलिंग के रूप में मान लिया है।"

तात्पर्य

उपनिषदों में कहा गया है— *यथाग्नेर् विस्फुलिंगा व्युच्चरन्ति*—जीव अग्नि के स्फुलिंगों के समान हैं और पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् मूल विशाल अग्नि माने जाते हैं। जब हम यह श्रुतिवाक्य सुनते हैं, तब हमें भगवान् कृष्ण तथा जीवों के बीच के अन्तर को समझना चाहिए। किन्तु जो व्यक्ति बहिरंगा शक्ति के अधीन होता है, वह इस अन्तर को नहीं समझ सकता। ऐसा व्यक्ति यह नहीं समझ सकता कि परम पुरुष मूल विशाल अग्नि हैं, जबकि जीव उन पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के सूक्ष्म भिन्नांश मात्र हैं। *भगवद्गीता* (१५.७) में कृष्ण कहते हैं :

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति॥

"इस बद्ध जगत् में सारे जीव मेरे शाश्वत अंश हैं। बद्ध जीवन के कारण वे मन सहित छहों इन्द्रियों से घोर संघर्ष कर रहे हैं।"

भौतिक जगत् के जीव के शरीर तथा आत्मा में अन्तर होता है, किन्तु श्री

चैतन्य महाप्रभु तथा भगवान् जगन्नाथ के कोई भौतिक शरीर नहीं होते हैं, अतएव उनके शरीरों तथा आत्माओं में कोई अन्तर नहीं है। आध्यात्मिक स्तर पर शरीर तथा आत्मा अभिन्न हैं, उनमें कोई अन्तर नहीं है। *श्रीमद्भागवत* (१.११.३८) में कहा गया है :

एतदीशनमीशस्य प्रकृतिस्थोऽपि तद्गुणैः।
न युज्यते सदात्मस्थैर्यथा बुद्धिस्तदाश्रया॥

"यह भगवान् का ईश्वरत्व है। वे भौतिक प्रकृति के गुणों से प्रभावित नहीं होते, यद्यपि वे उनके संसर्ग में रहते हैं। इसी तरह जिन भक्तों ने भगवान् की शरण ले रखी है, वे भौतिक गुणों द्वारा प्रभावित नहीं हो सकते।" पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण प्रकृति के तीन गुणों से प्रभावित नहीं होते। निस्सन्देह, उनके भक्त भी बहिरंगा शक्ति के प्रभाव से अकलुषित रहते हैं, क्योंकि वे भगवान् की सेवा में लगे रहते हैं। भक्त का शरीर भी आध्यात्मिक बन जाता है, जिस तरह कि अग्नि में रखी हुई लोहे की सलाख अग्नि के समान ही तप्त बन जाती है और जो कोई उसे छूता है, वह तुरन्त जल जाता है। इसलिए बंगाल के कवि ने भगवान् जगन्नाथ के शरीर तथा पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् जगन्नाथ को दो भिन्न हस्ती—भौतिक तथा आध्यात्मिक—मानकर, जैसे भगवान् कोई सामान्य जीव हों, घोर अपराध किया। भगवान् सदैव भौतिक शक्ति के स्वामी हैं, अतएव वे सामान्य जीव के समान भौतिक शक्ति द्वारा आच्छादित नहीं होते।

দুই-ঠাঞি অপরাধে পাইবি দুর্গতি! ।
অতত্ত্ব-জ্ঞ 'তত্ত্ব' বর্ণে, তার এই রীতি! ॥১২০॥

दुइ-ठाञि अपराधे पाइबि दुर्गति! ।
अतत्त्व-ज्ञ 'तत्त्व' वर्णे, तार एइ रीति! ॥१२०॥

दुइ-ठाञि—दोनों के प्रति; **अपराधे**—अपराध द्वारा; **पाइबि**—तुम्हें मिलेगा; **दुर्गति**—नरक वास; **अ-तत्त्व-ज्ञ**—जिसे परम सत्य का कुछ भी ज्ञान नहीं है; **तत्त्व वर्णे**—परम सत्य का वर्णन करता है; **तार**—उसकी; **एइ**—यही; **रीति**—गति है।

अनुवाद

स्वरूप दामोदर ने आगे कहा, "चूँकि तुमने भगवान् जगन्नाथ तथा

श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रति अपराध किया है, अतएव तुम्हें नरक की प्राप्ति होगी। तुम यह भी नहीं जानते कि परम सत्य का वर्णन किस तरह किया जाता है, तो भी तुमने ऐसा करने का प्रयास किया है। इसलिए तुम्हें धिक्कार है।

तात्पर्य

बंगाल से आया ब्राह्मण कवि स्वरूप दामोदर गोस्वामी की दृष्टि से एक अपराधी था, क्योंकि उसने परम सत्य का कोई ज्ञान न होते हुए भी उनका वर्णन करने का प्रयास किया था। यह बंगाली कवि श्री चैतन्य महाप्रभु तथा भगवान् जगन्नाथ दोनों के प्रति अपराधी था। चूँकि उसने भगवान् जगन्नाथ के शरीर तथा आत्मा में अन्तर किया था और उसी के साथ उसने श्री चैतन्य महाप्रभु को जगन्नाथजी से भिन्न कहा था, इसलिए उसने इन दोनों के प्रति अपराध किया था। *अ-तत्त्व-ज्ञ* वह है, जिसे परम सत्य का कोई ज्ञान नहीं होता अथवा जो अपने शरीर की पूजा पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के रूप में करता है। यदि सकाम कर्म में लगा या केवल इन्द्रियतृप्ति में लगा रहने वाला व्यक्ति- *अहंग्रहोपासक-मायावादी*—परम सत्य का वर्णन करता है, तो वह तुरन्त अपराधी बन जाता है।

আর এক করিয়াছ পরম 'প্রমাদ'! ।
দেহ-দেহি-ভেদ ঈশ্বরে কৈলে 'অপরাধ'! ॥ ১২১ ॥

आर एक करियाछ परम 'प्रमाद'! ।
देह-देहि-भेद ईश्वरे कैले 'अपराध'! ॥ १२१ ॥

आर एक—एक ओर; **करियाछ**—तुमने किया है; **परम**—बड़ी; **प्रमाद**—गलती; **देह-देहि-भेद**—शरीर और आत्मा के बीच अन्तर; **ईश्वरे**—भगवान् में; **कैले**—तुमने किया है; **अपराध**—अपराध।

अनुवाद

"तुम पूर्णतया भ्रम में हो, क्योंकि तुमने भगवान् (जगन्नाथ अथवा श्री चैतन्य महाप्रभु) के शरीर तथा आत्मा में भेद किया है। यह एक महान् अपराध है।

तात्पर्य

जब कोई व्यक्ति पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के शरीर तथा आत्मा में अन्तर करता है, तो वह तुरन्त अपराधी बन जाता है। चूँकि भौतिक जगत् में सारे जीव भौतिक शरीरों से आच्छादित होते हैं, अतएव सामान्य मनुष्य के शरीर तथा आत्मा अभिन्न नहीं हो सकते। परम भगवान् हर एक को उसके कर्म का फल देते हैं, क्योंकि वे सकाम कर्म के फलों के स्वामी हैं। वे समस्त कारणों के कारण भी हैं और भौतिक शक्ति के स्वामी हैं। अतएव वे सर्वश्रेष्ठ हैं। किन्तु सामान्य जीव अपनी भौतिक दशा में अपने सकाम कर्मों के फलों का भोग करता है, अतएव उनके प्रभाव में आ जाता है। यहाँ तक कि *ब्रह्मभूत* की मुक्त अवस्था में भी वह भगवान् की सेवा करता है। इस तरह सामान्य जीव तथा परम भगवान् में अन्तर होते हैं। जो कर्मी तथा ज्ञानी इन अन्तरों की अवहेलना करते हैं, वे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के चरणकमलों के प्रति अपराधी हैं।

सामान्य व्यक्ति भौतिक शक्ति के वशीभूत हो सकता है, किन्तु पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्—श्री चैतन्य महाप्रभु, भगवान् कृष्ण या भगवान् जगन्नाथ—सदैव भौतिक शक्ति के स्वामी हैं, अतएव वे कभी भी उसके प्रभाव के पात्र नहीं होते। पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का परम असीम आध्यात्मिक स्वरूप होता है, जो कभी खंडित नहीं होता, किन्तु जीव की चेतना सीमित तथा सूक्ष्म होती है। सारे जीव पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के सनातन सूक्ष्म भिन्नांश होते हैं (*ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः*)। ऐसा नहीं है कि वे बद्ध जीवन में भौतिक शक्ति द्वारा आच्छादित रहते हैं, किन्तु जब इस भौतिक शक्ति के प्रभाव से मुक्त कर दिये जाते हैं, तो वे भगवान् के साथ एकाकार हो जाते हैं। ऐसा विचार अपराध है।

मायावादी मूर्खों के अनुसार पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् भौतिक भौतिक जगत् में प्रकट होते हैं, तब वे भौतिक शरीर धारण करते हैं। किन्तु एक वैष्णव इसे भलीभाँति जानता है कि सामान्य मनुष्यों की तरह कृष्ण, भगवान् जगन्नाथ या श्री चैतन्य महाप्रभु के शरीर तथा आत्मा में कोई अन्तर नहीं होता। यहाँ तक कि भौतिक जगत् में भी भगवान् अपना आध्यात्मिक स्वरूप बनाये रखते हैं। इसीलिए भगवान् कृष्ण ने अपने बाल रूप में भी समस्त ऐश्वर्यों को प्रकट

किया। कृष्ण के शरीर तथा आत्मा में कोई अन्तर नहीं है—चाहे उनका बाल रूप हो या कौमार रूप। वे सदैव अपने शरीर से अभिन्न हैं। यद्यपि कृष्ण सामान्य मनुष्य की तरह प्रकट होते हैं, किन्तु उन पर भौतिक जगत् के नियम लागू नहीं होते। वे *स्वराट्* हैं—पूर्ण स्वतन्त्र हैं। वे भौतिक जगत् में प्रकट हो सकते हैं, किन्तु इस मायावादी-मत के अपराधमूलक निष्कर्ष के विपरीत, उनका शरीर भौतिक नहीं होता। इस सन्दर्भ में पुनः *श्रीमद्भागवत* के उपर्युक्त श्लोक (१.११.३८) का उल्लेख किया जा सकता है :

एतदीशनमीशस्य प्रकृतिस्थोऽपि तद्गुणैः।
न युज्यते सदात्मस्थैर्यथा बुद्धिस्तदाश्रया॥

परम पुरुष का शरीर सनातन तथा आध्यात्मिक होता है। यदि कोई पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के शरीर तथा आत्मा में भेद करना चाहता है, तो वह महान् अपराध करता है।

ঈশ্বরের নাহি কভু দেহ-দেহি-ভেদ ।
স্বরূপ, দেহ,—চিদানন্দ, নাহিক বিভেদ ॥১২২॥

ईश्वरेर नाहि कभु देह-देहि-भेद ।
स्वरूप, देह,—चिदानन्द, नाहिक विभेद ॥१२२॥

ईश्वरेर—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का; **नाहि**—नहीं है; **कभु**—कभी भी; **देह-देहि-भेद**—शरीर और आत्मा में अन्तर; **स्वरूप**—स्वरूप; **देह**—शरीर; **चित्-आनन्द**—आनन्दमय आध्यात्मिक शक्ति से निर्मित; **नाहिक विभेद**—कुछ भी अन्तर नहीं है।

अनुवाद

"पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के शरीर तथा आत्मा में कभी भी कोई अन्तर नहीं होता। उनका स्वरूप तथा उनका शरीर आनन्दमय आध्यात्मिक शक्ति से बना होता है (*चिदानन्द*)। उनमें कोई अन्तर नहीं होता।

तात्पर्य

नन्द महाराज के पुत्र भगवान् कृष्ण *अद्वय-ज्ञान* हैं—अर्थात् उनके शरीर तथा आत्मा में कोई अन्तर नहीं होता, क्योंकि उनका अस्तित्व पूर्णतया आध्यात्मिक है। *वदन्ति तत्तत्त्वविदस्तत्त्वम्* से प्रारम्भ होने वाले *श्रीमद्भागवत*

के श्लोक (१.२.११) के अनुसार परम सत्य को सदा तीन दृष्टिबिन्दुओं से समझा जाना चाहिए—ब्रह्म, परमात्मा तथा भगवान्। किन्तु भौतिक जगत् की वस्तुओं के विपरीत, परम सत्य सदैव एक और अपरिवर्तित रहता है। इसलिए उनके शरीर तथा आत्मा में कोई अन्तर नहीं होता। अतएव उनके रूप, नाम, गुण तथा लीलाएँ भौतिक जगत् की लीलाओं आदि से सर्वथा भिन्न हैं। यह भलीभाँति समझ लेना होगा कि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के शरीर तथा आत्मा में कोई अन्तर नहीं है। जब कोई व्यक्ति उनके शरीर तथा आत्मा में अन्तर की कल्पना करता है, तो वह तुरन्त भौतिक प्रकृति द्वारा बद्ध हो जाता है। चूँकि भौतिक जगत् में मनुष्य ऐसे अन्तर करता है, इसीलिए वह *बद्धजीव* कहलाता है

''देह-देहि-विभागोऽयं नेश्वरे विद्यते क्वचित्'' ॥ १२३॥
"देह-देहि-विभागोऽयं नेश्वरे विद्यते क्वचित्" ॥ १२३॥

देह—शरीर का; **देहि**—आत्मा का; **विभागः**—भेद; **अयम्**—यह; **न**—नहीं; **ईश्वरे**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् में; **विद्यते**—होता है; **क्वचित्**—कभी भी।

अनुवाद

"'पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के शरीर तथा आत्मा में कभी भी कोई अन्तर नहीं होता।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *लघु भागवतामृत* (१.५.३४२) में सम्मिलित है और *कूर्म पुराण* का है।

नातः परं परम यद्भवतः स्वरूपम्
आनन्द-मात्रमविकल्पमविद्ध-वर्चः ।
पश्यामि विश्व-सृजमेकमविश्वमात्मन्
भूतेन्द्रियात्मक-मदस्त उपाश्रितोऽस्मि ॥ १२४॥
तद्वा इदं भुवन-मङ्गल मङ्गलाय
ध्याने स्म नो दरशितं त उपासकानाम् ।

तस्मै नमो भगवतेऽनुविधेम तुभ्यं
योऽनादृतो नरक-भाग्भिरसत्प्रसङ्गैः ॥ १२५ ॥

नातः परं परम यद्भवतः स्वरूपम्
आनन्द-मात्रमविकल्पमविद्ध-वर्चः ।
पश्यामि विश्व-सृजमेकमविश्वमात्मन्
भूतेन्द्रियात्मक-मदस्त उपाश्रितोऽस्मि ॥ १२४ ॥
तद्वा इदं भुवन-मङ्गल मङ्गलाय
ध्याने स्म नो दरशितं त उपासकानाम् ।
तस्मै नमो भगवतेऽनुविधेम तुभ्यं
योऽनादृतो नरक-भाग्भिरसत्प्रसङ्गैः ॥ १२५ ॥

न—नहीं; **अतः परम्**—इससे बढ़कर; **परम**—हे परमेश्वर; **यत्**—जो; **भवतः**—आपके; **स्वरूपम्**—नित्य स्वरूप; **आनन्द-मात्रम्**—निराकार ब्रह्मज्योति; **अविकल्पम्**—परिवर्तन रहित; **अविद्ध-वर्चः**—शक्ति के क्षय से रहित; **पश्यामि**—मैं देखता हूँ; **विश्व-सृजम्**—ब्रह्माण्ड के रचयिता; **एकम्**—अद्वितीय; **अविश्वम्**—जड़ से परे; **आत्मन्**—हे परम कारण; **भूत**—शरीर; **इन्द्रिय**—इन्द्रियाँ; **आत्मक**—ऐसे व्यक्तित्व पर; **मदः**—घमण्ड; **ते**—आपको; **उपाश्रितः**—समर्पित; **अस्मि**—मैं हूँ; **तत्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **वा**—या; **इदम्**—यह वर्तमान स्वरूप; **भुवन-मङ्गल**—वे सभी ब्रह्माण्डों के लिए सर्व शुभकारी हैं; **मङ्गलाय**—सर्वमंगल के लिए; **ध्याने**—ध्यान में; **स्म**—यह जैसा था; **नः**—हमारे लिए; **दरशितम्**—प्रकट हुआ; **ते**—आपके; **उपासकानाम्**—भक्तों का; **तस्मै**—उनको; **नमः**—मेरा सादर प्रणाम; **भगवते**—भगवान् के लिए; **अनुविधेम**—मैं करता हूँ; **तुभ्यम्**—आपको; **यः**—जो; **अनादृतः**—आदर नहीं किया गया; **नरक-भाग्भिः**—नरक जाने योग्य लोगों द्वारा; **असत्-प्रसङ्गैः**—भौतिक विषयों द्वारा।

अनुवाद

"'हे मेरे प्रभु, मैं आपके इस शाश्वत आनन्द तथा ज्ञानमय रूप से श्रेष्ठ अन्य कोई रूप नहीं देखता हूँ। आध्यात्मिक आकाश में आपकी निर्विशेष ब्रह्मज्योति में न तो समय-समय पर कोई परिवर्तन होता है और न आपकी अन्तरंगा शक्ति में कोई ह्रास पाया जाता है। मैं आपके प्रति आत्मसमर्पण करता हूँ, क्योंकि यद्यपि मुझे अपने भौतिक शरीर और इन्द्रियों पर अभिमान है, किन्तु आप पूरे ब्रह्माण्ड की सृष्टि के कारण हैं। फिर भी आपको जड़ पदार्थ स्पर्श नहीं करता।

'"आपका यह वर्तमान स्वरूप अथवा पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा विस्तारित कोई अन्य रूप समस्त ब्रह्माण्डों के लिए समान रूप से मंगलकारी है। चूँकि आपने अपने इस शाश्वत व्यक्तिगत रूप को प्रकट किया है, जिसका आपके भक्त ध्यान करते हैं, इसलिए मैं आपको सादर नमन करता हूँ। जिन लोगों के भाग्य में नरक जाना निश्चित हो चुका है, वे लौकिक विषयों के चिन्तन में तल्लीन रहने के कारण आपके निजी रूप की उपेक्षा करते हैं।'

तात्पर्य

ये श्लोक *श्रीमद्भागवत* (३.९.३-४) से हैं, जिन्हें ब्रह्माजी ने कहा था।

काहाँ 'पूर्णानन्दैश्वर्य' कृष्ण 'मायेश्वर'। ।
काहाँ 'क्षुद्र' जीव 'दुःखी', 'मायार किङ्कर'। ॥१२६॥

काहाँ 'पूर्णानन्दैश्वर्य' कृष्ण 'मायेश्वर'! ।
काहाँ 'क्षुद्र' जीव 'दुःखी', 'मायार किङ्कर'! ॥ १२६ ॥

काहाँ—कहाँ; **पूर्ण**—पूर्ण; **आनन्द**—आनन्द; **ऐश्वर्य**—ऐश्वर्य; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **माया-ईश्वर**—भौतिक प्रकृति के स्वामी; **काहाँ**—कहाँ; **क्षुद्र जीव**—तुच्छ बद्धजीव; **दुःखी**—दुःखी; **मायार किङ्कर**—भौतिक शक्ति का दास।

अनुवाद

"कहाँ दिव्य आनन्द से पूर्ण, छः पूर्ण आध्यात्मिक ऐश्वर्यों से युक्त तथा भौतिक शक्ति के स्वामी परम सत्य, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण और कहाँ क्षुद्र बद्धजीव, जो सदैव दुःखी रहता है और भौतिक शक्ति का दास है।

तात्पर्य

जीव तो भौतिक शक्ति (माया) का नित्य बद्ध दास है, जबकि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण भौतिक शक्ति के स्वामी (*मायेश्वर*) हैं। तो भला वे किस तरह समान स्तर पर हो सकते हैं? उनमें कोई तुलना नहीं हो सकती। भगवान् सदैव दिव्य आनन्द की अवस्था को प्राप्त रहते हैं, जबकि जीव भौतिक शक्ति के सम्पर्क में होने के कारण सदैव दुःखी रहता है। परमेश्वर भौतिक शक्ति

को नियन्त्रित करते हैं और भौतिक शक्ति बद्धजीवों को नियन्त्रित करती है। इसलिए पूर्ण पूरुषोत्तम भगवान् तथा सामान्य जीवों में कोई तुलना नहीं हो सकती।

''ह्लादिन्या सम्विदाश्लिष्टः सच्चिदानन्द-ईश्वरः ।
स्वाविद्या संवृतो जीवः सङ्क्लेश-निकराकरः'' ॥ १२७॥

"ह्लादिन्या सम्विदाश्लिष्टः सच्चिदानन्द-ईश्वरः ।
स्वाविद्या संवृतो जीवः सङ्क्लेश-निकराकरः" ॥ १२७॥

ह्लादिन्या—ह्लादिनी शक्ति द्वारा; **सम्विदा**—सम्वित् शक्ति द्वारा; **आश्लिष्टः**—आवृत; **सत्-चित्-आनन्दः**—सदैव दिव्य आनन्द से पूर्ण; **ईश्वरः**—परम नियन्ता; **स्व**—अपने; **अविद्या**—अज्ञान द्वारा; **संवृतः**—आवृत; **जीवः**—जीव; **सङ्क्लेश**—त्रि-तापों के; **निकर**—भण्डार की; **आकरः**—खान।

अनुवाद

""परम नियन्ता, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् सदैव दिव्य आनन्द से पूरित रहते हैं और ह्लादिनी तथा सम्वित् नामक शक्तियों से युक्त होते हैं। किन्तु बद्धजीव सदैव अविद्या से आवृत रहता है और जीवन के तीन क्लेशों से चिन्तित रहता है। इस तरह वह सभी प्रकार के क्लेशों का आगार होता है।""

तात्पर्य

यह श्लोक श्रीधर स्वामी कृत *भावार्थ दीपिका* (१.७.६) में है, जहाँ वे श्री विष्णु स्वामी का उद्धरण दे रहे हैं।

শুনি' সভা-সদের চিত্তে হৈল চমত্কার ।
'সত্য কহে গোসাঞি, দুঁহার করিয়াছে তিরস্কার' ॥ ১২৮॥

শুনি' সভা-সদের চিত্তে হৈল চমত্কার ।
'সত্য কহে গোসাঞি, দুঁহার করিয়াছে তিরস্কার' ॥ ১২৮॥

শুনি'—सुनकर; **সভা-সদের**—सभा के सभी सदस्यों के; **চিত্তে**—मनों में; **হৈল**—हो गया; **চমত্কার**—आश्चर्य; **সত্য**—सच; **কহে**—कहा; **গোসাঞি**—स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने; **দুঁহার**—दोनों का; **করিয়াছে**—किया है; **তিরস্কার**—अपराध।

अनुवाद

यह व्याख्या सुनकर सभा के सारे सदस्य आश्चर्यचकित हो गये। उन्होंने स्वीकार किया कि, "स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने वास्तविक सत्य कहा है। बंगाल के इस ब्राह्मण ने भगवान् जगन्नाथ तथा श्री चैतन्य महाप्रभु का गलत वर्णन करके अपराध किया है।"

শুনিয়া কবির হৈল লজ্জা, ভয়, বিস্ময় ।
হংস-মধ্যে বক যৈছে কিছু নাহি কয় ॥ ১২৯॥

শুনিয়া কবির হৈল লজ্জা, ভয়, বিস্ময় ।
হংস-মধ্যে বক গ্রৈছে কিছু নাহি কয় ॥ ১২৯॥

শুনিয়া—सुनकर; **কবির**—कवि का; **হৈল**—हो गया; **লজ্জা**—शर्म; **ভয়**—भय; **বিস্ময়**—आश्चर्य; **হংস-মধ্যে**—श्वेत हंसों की सभा में; **বক**—एक बगुला; **গ্রৈছে**—जैसे; **কিছু**—कुछ; **নাহি**—नहीं; **কয়**—कहता।

अनुवाद

जब बंगाली कवि ने स्वरूप दामोदर गोस्वामी की यह भर्त्सना सुनी, तो वह लज्जित, भयभीत तथा आश्चर्यचकित हुआ। निस्सन्देह, हंसों के बीच में बगुले की तरह होने से वह कुछ भी नहीं कह सका।

তার দুঃখ দেখি, স্বরূপ সদয়-হৃদয় ।
উপদেশ কৈলা তারে যৈছে 'হিত' হয় ॥ ১৩০॥

তার দুঃখ দেখি, স্বরূপ সদয়-হৃদয় ।
উপদেশ কৈলা তারে গ্রৈছে 'হিত' হয় ॥ ১৩০॥

তার—उसकी; **দুঃখ দেখি**—अप्रसन्नता देखकर; **স্বরূপ**—स्वरूप दामोदर गोस्वामी; **সদয়-হৃদয়**—अत्यन्त दयापूर्ण हृदय से; **উপদেশ কৈলা**—उपदेश दिये; **তারে**—उसे; **গ্রৈছে**—ताकि; **হিত**—लाभ; **হয়**—हो सके।

अनुवाद

कवि के दुःख को देखकर अत्यन्त दयालु स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने उसे उपदेश दिया, जिससे उसे कुछ लाभ मिल सके।

"'याह, भागवत पड़ वैष्णवेर स्थाने ।
एकान्त आश्रय कर चैतन्य-चरणे ॥ १३१ ॥
"याह, भागवत पड़ वैष्णवेर स्थाने ।
एकान्त आश्रय कर चैतन्य-चरणे ॥ १३१ ॥

याह—जाओ; **भागवत पड़**—*श्रीमद्भागवत* पढ़ो; **वैष्णवेर स्थाने**—एक स्वरूप सिद्ध वैष्णव से; **एकान्त आश्रय कर**—पूर्ण समर्पण करो; **चैतन्य-चरणे**—श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में।

अनुवाद

उन्होंने कहा, "यदि तुम श्रीमद्भागवत समझना चाहते हो, तो तुम्हें किसी स्वरूपसिद्ध वैष्णव के पास जाकर उससे सुनना चाहिए। तुम ऐसा तब कर सकते हो, जब तुम श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में पूरी तरह से शरण ग्रहण करते हो।"

तात्पर्य

यहाँ पर स्वरूप दामोदर गोस्वामी बंगाली कवि को शुद्ध वैष्णव से *श्रीमद्भागवत* सुनने और उनसे सीखने का उपदेश देते हैं। विशेषतया भारत में आजकल पेशेवर भागवत वाचकों का एक वर्ग है, जिनकी जीविका का साधन एक गाँव से दूसरे गाँव, एक नगर से दूसरे नगर जाकर *भागवत* का पठन करना तथा धन या सामान यथा छाता, वस्त्र, फल के रूप में दक्षिणा एकत्र करना है। इस तरह अब भागवत का व्यापार चल रहा है, जिसमें एक सप्ताह तक पाठ चलता है, जिसे *भागवत सप्ताह* कहते हैं, यद्यपि *श्रीमद्भागवत* में इसका कहीं कोई उल्लेख नहीं है। *श्रीमद्भागवत* में कहीं नहीं कहा गया है कि पेशेवर लोगों से एक सप्ताह में *भागवत* सुनी जाए। प्रत्युत *श्रीमद्भागवत* का कथन है (१.२.१७): *शृण्वतां स्वकथा कृष्णः पुण्यश्रवणकीर्तनः।* नियमित रूप से किसी स्वरूपसिद्ध वैष्णव से *श्रीमद्भागवत* का श्रवण करना चाहिए। ऐसे श्रवण से वह पवित्र हो जाता है। *हृद्यन्तस्थो ह्यभद्राणि विधुनोति सुहृत्सताम्।* इस तरह जब कोई व्यक्ति नियमित रूप से तथा निष्ठापूर्वक भागवत सुनता है, तो उसका हृदय समस्त भौतिक कल्मष से मुक्त हो जाता है :

नष्टप्रायेष्वभद्रेषु नित्यं भागवतसेवया।
भगवत्युत्तमश्लोके भक्तिर्भवति नैष्ठिकी॥

"जब कोई व्यक्ति नियमित रूप से भागवत सुनता है और शुद्ध भक्त की सेवा करता है, तो हृदय को कष्ट देने वाली हर वस्तु का लगभग विनाश हो जाता है और उत्तमश्लोक यशस्वी भगवान् के प्रति, जिनकी दिव्य गीतों से स्तुति की जाती है, प्रेमाभक्ति निर्विवाद रूप से स्थापित हो जाती है।" (*भागवत* १.२.१८)

यही सही विधि है, किन्तु लोग पेशेवर *भागवत* वाचकों द्वारा पथ-भ्रष्ट किये जाते हैं। इसलिए यहाँ पर स्वरूप दामोदर गोस्वामी परामर्श देते हैं कि पेशेवर वाचकों से *श्रीमद्भागवत* न सुनी जाए। बल्कि स्वरूपसिद्ध वैष्णव से *भागवत* सुनी और सीखी जाए। कभी-कभी यह देखा जाता है कि जब कोई मायावादी संन्यासी *भागवत* का पठन करता है, तो लोगों के झुंड शब्दों की जादूगरी सुनने जाते हैं, जिनसे कृष्ण के प्रति सुप्त प्रेम जागृत नहीं हो पाता। कभी-कभी लोग पेशेवर नाटक देखने तथा अभिनेताओं को भोजन तथा धन भेंट करने जाते हैं, जो इन भेंटों को एकत्र करने में पटु होते हैं। इसका फल यह होता है कि श्रोता लोग *गृहमन्धकूपम्* अर्थात् पारिवारिक आसक्ति की उसी स्थिति में पड़े रहते हैं और वे कृष्ण-प्रेम को जागृत नहीं कर पाते।

भागवत (७.५.३०) में कहा गया है—*मतिर्न कृष्णे परतः स्वतो वा मिथोऽभिपद्येत गृहव्रतानाम्*—गृहव्रत अर्थात् जो भौतिकतावादी जीवन-शैली बनाये रखने के लिए दृढ़ संकल्प हैं, वे कभी भी अपने सुप्त कृष्ण-प्रेम को जागृत नहीं कर पायेंगे, क्योंकि वे गृहस्थ जीवन में अपनी स्थिति को दृढ़ करने के लिए तथा गृहस्थी एवं कामवासना में सुखी रहने के लिए ही *भागवत* सुनते हैं। पेशेवर लोगों से *भागवत* सुनने की इस विधि की भर्त्सना करते हुए स्वरूप दामोदर गोस्वामी कहते हैं *याह, भागवत पड़ वैष्णवेर स्थाने*—"*भागवत* समझने के लिए तुम्हें स्वरूपसिद्ध वैष्णव के पास जाना चाहिए।" मायावादी या अन्य अभक्त व्याकरण का प्रयोग करके शब्दों के वाग्जाल द्वारा शास्त्रों का मनगढ़न्त मतलब निकालने का प्रयास करता है और अबोध जनता से धन एकत्र करता है तथा लोगों को अन्धकार में रखता है। ऐसे लोगों से *भागवत* नहीं सुननी चाहिए।

स्वरूप दामोदर गोस्वामी *श्रीमद्भागवत* के तथाकथित भौतिकतावादी श्रोताओं के आचरण का कड़ाई से निषेध करते हैं। ऐसे *भागवत* श्रोता वास्तविक कृष्ण-प्रेम जागृत न करके गृहस्थ जीवन तथा यौन जीवन के प्रति अधिकाधिक आसक्त हो जाते हैं (*यन्मैथुनादिगृहमेधिसुखं हि तुच्छम्*) । *श्रीमद्भागवत* ऐसे व्यक्ति से सुननी चाहिए, जिसका भौतिक कार्यकलापों से कोई सम्बन्ध न हो अर्थात् जो परमहंस वैष्णव हो। संन्यास की सर्वोच्च अवस्था को प्राप्त व्यक्ति को परमहंस वैष्णव कहते हैं। निस्सन्देह, ऐसा तब तक सम्भव नहीं है, जब तक मनुष्य श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों की शरण ग्रहण नहीं करता। श्री चैतन्य महाप्रभु के पदचिह्नों का अनुसरण करने वाला व्यक्ति ही *श्रीमद्भागवत* को समझ सकता है।

চৈতন্যের ভক্ত-গণের নিত্য কর 'সঙ্গ' ।
তবেত জানিবা সিদ্ধান্ত-সমুদ্র-তরঙ্গ ॥ ১৩২॥

चैतन्येर भक्त-गणेर नित्य कर 'सङ्ग' ।
तबेत जानिबा सिद्धान्त-समुद्र-तरङ्ग ॥ १३२॥

चैतन्येर—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु के; **भक्त-गणेर**—भक्तों का; **नित्य**—नियमित; **कर**—करो; **सङ्ग**—संग; **तबेत**—केवल तभी; **जानिबा**—तुम समझोगे; **सिद्धान्त-समुद्र-तरङ्ग**—भक्ति के समुद्र की लहरों को।

अनुवाद

स्वरूप दामोदर ने आगे कहा, "श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्तों की नियमित रूप से संगति करो, तभी तुम भक्ति के समुद्र की तरंगों को समझ सकोगे।

तात्पर्य

इस सम्बन्ध में यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि श्री चैतन्य महाप्रभु की भक्ति-पद्धति के अनुयायी पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के सनातन संगी हैं और परम सत्य के पूर्ण ज्ञाता हैं। यदि कोई श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्तों की संगति करके महाप्रभु के सिद्धान्तों का तुरन्त पालन करता है, तो उसके हृदय से भौतिक भोग की सारी काम-वासनाएँ लुप्त हो जाएँगी। तभी वह *श्रीमद्भागवत*

का अर्थ और इसके सुनने के महत्त्व को समझ सकेगा। अन्यथा ऐसा समझ पाना असम्भव है।

তবেত পাণ্ডিত্য তোমার হইবে সফল ।
কৃষ্ণের স্বরূপ-লীলা বর্ণিবা নির্মল ॥ ১৩৩॥

তবেত পাণ্ডিত্য তোমার হইবে সফল ।
কৃষ্ণের স্বরূপ-লীলা বর্ণিবা নির্মল ॥ ১৩৩॥

तबेत—केवल तभी; **पाण्डित्य**—विद्वत्ता; **तोमार**—तुम्हारी; **हइबे**—होगी; **स-फल**—सफल; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण की; **स्वरूप-लीला**—दिव्य लीलाएँ; **वर्णिबा**—तुम वर्णन करोगे; **निर्मल**—भौतिक कल्मष से रहित।

अनुवाद

"जब तुम श्री चैतन्य महाप्रभु तथा उनके भक्तों के सिद्धान्तों का पालन करोगे, तभी तुम्हारी विद्या सफल होगी। तभी तुम भौतिक कल्मष के बिना कृष्ण की दिव्य लीलाओं के विषय में लिख सकोगे।

এই শ্লোক করিয়াছ পাঞা সন্তোষ ।
তোমার হৃদয়ের অর্থে দুঁহায় লাগে 'দোষ' ॥ ১৩৪॥

এই শ্লোক করিয়াছ পাঞা সন্তোষ ।
তোমার হৃদয়ের অর্থে দুঁহায় লাগে 'দোষ' ॥ ১৩৪॥

एइ श्लोक—यह श्लोक; **करियाछ**—तुमने रचा है; **पाञा सन्तोष**—सन्तोष पाकर; **तोमार हृदयेर**—तुम्हारे हृदय का; **अर्थे**—अर्थ द्वारा; **दुँहाय**—दोनों के प्रति; **लागे दोष**—अपराध हुआ है।

अनुवाद

"यद्यपि तुमने इस परिचयात्मक श्लोक की रचना पूर्ण सन्तोषपूर्वक की है, किन्तु जिस अर्थ को तुमने व्यक्त किया है, वह जगन्नाथजी तथा श्री चैतन्य महाप्रभु दोनों के प्रति अपराध से दूषित है।

তুমি যৈছে-তৈছে কহ, না জানিয়া রীতি ।
সরস্বতী সেই-শব্দে করিয়াছে স্তুতি ॥ ১৩৫॥

तुमि ग्रैछे-तैछे कह, ना जानिया रीति ।
सरस्वती सेइ-शब्दे करियाछे स्तुति ॥ १३५ ॥

तुमि—तुम; **ग्रैछे-तैछे**—जैसे-तैसे; **कह**—कहते हो; **ना जानिया रीति**—नियमों को जाने बिना; **सरस्वती**—विद्या की देवी ने; **सेइ-शब्दे**—उन शब्दों में; **करियाछे स्तुति**—प्रार्थनाएँ बनाई हैं।

अनुवाद

"तुमने नियमों को न जानते हुए अनाप-शनाप लिखा है, किन्तु देवी सरस्वती ने तुम्हारे शब्दों का उपयोग भगवान् को अपनी स्तुति भेंट करने के लिए कर लिया है।

तात्पर्य

स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने बंगाली कवि को बतलाया, "तुम अपने अज्ञान तथा मायावादी दर्शन के प्रति झुकाव के कारण मायावाद तथा वैष्णव दर्शन में अन्तर नहीं कर सकते। इसलिए श्री चैतन्य महाप्रभु तथा भगवान् जगन्नाथ की प्रशंसा करने के लिए तुमने जो प्रक्रिया अपनाई है, वह विधिपूर्वक नहीं है, अपितु वह अनियमित तथा अपराधपूर्ण है। किन्तु सौभाग्यवश तुम्हारे शब्दों से सरस्वती माता ने अपने स्वामी श्री चैतन्य महाप्रभु की स्तुति चतुराई से की है।"

যৈছে ইন্দ্র, দৈত্যাদি করে কৃষ্ণের ভৎর্সন ।
সেই-শব্দে সরস্বতী করেন স্তবন ॥ ১৩৬ ॥

ग्रैछे इन्द्र, दैत्यादि करे कृष्णेर भर्त्सन ।
सेइ-शब्दे सरस्वती करेन स्तवन ॥ १३६ ॥

ग्रैछे—जिस प्रकार; **इन्द्र**—इन्द्र, स्वर्ग का राजा; **दैत्य**—राक्षस; **आदि**—और अन्य; **करे**—करते हैं; **कृष्णेर भर्त्सन**—कृष्ण की निन्दा; **सेइ-शब्दे**—उन शब्दों द्वारा; **सरस्वती**—विद्या की देवी; **करेन स्तवन**—प्रार्थनाएँ अर्पित करती हैं।

अनुवाद

"कभी-कभी असुर तथा स्वर्ग का राजा इन्द्र तक कृष्ण की भर्त्सना करते थे, किन्तु माता सरस्वती ने उनके शब्दों का लाभ उठाकर भगवान् की स्तुति की।

वाचालं वालिशं स्तब्धं अज्ञं पण्डित-मानिनम् ।
कृष्णं मर्त्यमुपाश्रित्य गोपा मे चक्रुरप्रियम् ॥ १३७ ॥

वाचालं बालिशं स्तब्धं अज्ञं पण्डित-मानिनम् ।
कृष्णं मर्त्यमुपाश्रित्य गोपा मे चक्रुरप्रियम् ॥ १३७ ॥

वाचालम्—बातूनी; **बालिशम्**—बचकाना; **स्तब्धम्**—धृष्ट; **अज्ञम्**—मूर्ख; **पण्डित-मानिनम्**—स्वयं को महान् विद्वान समझने वाला; **कृष्णम्**—कृष्ण को; **मर्त्यम्**—एक साधारण मरणशील मनुष्य; **उपाश्रित्य**—शरण लेकर; **गोपाः**—ग्वालों ने; **मे**—मेरे प्रति; **चक्रुः**—करते; **अप्रियम्**—जो बहुत अच्छा नहीं लगता।

अनुवाद

"[इन्द्र ने कहा :] 'यह कृष्ण एक सामान्य मनुष्य है और वह वाचाल, बचकाना, उद्धत तथा अज्ञानी है, यद्यपि वह अपने आपको बहुत विद्वान मानता है। वृन्दावन के ग्वालों ने उसको स्वीकार करके मेरा अपमान किया है। यह बात मुझे बिल्कुल अच्छी नहीं लगी।"

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.२५.५) से लिया गया है।

ऐश्वर्य-मदे मत्त इन्द्र,—येन मातोयाल ।
बुद्धि-नाश हैल, केवल नाहिक साम्भाल ॥ १३८ ॥

ऐश्वर्य-मदे मत्त इन्द्र,—येन मातोयाल ।
बुद्धि-नाश हैल, केवल नाहिक साम्भाल ॥ १३८ ॥

ऐश्वर्य-मदे—अपने ऐश्वर्य के अभिमान में; **मत्त**—उन्मत्त; **इन्द्र**—स्वर्ग का राजा; **येन**—जैसे; **मातोयाल**—एक पागल व्यक्ति; **बुद्धि-नाश**—बुद्धि रहित; **हैल**—हो गया; **केवल**—केवल; **नाहिक**—नहीं; **साम्भाल**—सावधान।

अनुवाद

"स्वर्ग का राजा इन्द्र अपने स्वर्ग के ऐश्वर्य से अति गर्वित होकर पागल की तरह बन गया। इस तरह बुद्धि से रहित होकर वह कृष्ण के विषय में अनाप-शनाप बोलने से अपने आपको रोक न सका।

ইন্দ্র বলে,——"মুঞি কৃষ্ণের করিয়াছি নিন্দন" ।
তার-ই মুখে সরস্বতী করেন স্তবন ॥১৩৯॥

इन्द्र बले,——"मुञि कृष्णेर करियाछि निन्दन" ।
तार-इ मुखे सरस्वती करेन स्तवन ॥ १३९ ॥

इन्द्र बले—इन्द्र कहता है; **मुञि**—मैंने; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण की; **करियाछि**—की है; **निन्दन**—निन्दा और अपमान; **तार-इ मुखे**—उसके मुख से; **सरस्वती**—माता सरस्वती, विद्या की देवी; **करेन स्तवन**—प्रार्थनाएँ करती हैं।

अनुवाद

"इस प्रकार इन्द्र ने सोचा, 'मैंने ठीक ही कृष्ण की भर्त्सना की और उसकी निन्दा की।' किन्तु विद्या की देवी सरस्वती ने इस अवसर का लाभ कृष्ण की स्तुति करने में उठाया।

'বাচাল' কহিয়ে——'বেদ-প্রবর্তক' ধন্য ।
'বালিশ'——তথাপি 'শিশু-প্রায়' গর্ব-শূন্য ॥১৪০॥

'वाचाल' कहिये——'वेद-प्रवर्तक' धन्य ।
'बालिश'——तथापि 'शिशु-प्राय' गर्व-शून्य ॥ १४० ॥

वाचाल—बातूनी; **कहिये**—मैं कहता हूँ; **वेद-प्रवर्तक**—जो वेद के आधार पर बोल सकता है; **धन्य**—धन्य है; **बालिश**—बचकाना; **तथापि**—फिर भी; **शिशु-प्राय**—बच्चे जैसा; **गर्व-शून्य**—गर्व रहित।

अनुवाद

"'वाचाल' शब्द का प्रयोग ऐसे व्यक्ति के लिए किया जाता है, जो वैदिक प्रमाण के अनुसार बोल सकता है और 'बालिश' शब्द का अर्थ है 'अबोध।' कृष्ण ने वैदिक ज्ञान का प्रवचन किया, फिर भी वे अपने आपको सदैव गर्वशून्य, अबोध बालक के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

বন্দ্যাভাবে 'অনম্র'——'স্তব্ধ'-শব্দে কয় ।
যাহা হৈতে অন্য 'বিজ্ঞ' নাহি——সে 'অজ্ঞ' হয় ॥১৪১॥

वन्द्याभावे 'अनम्र'——'स्तब्ध'-शब्दे कय ।
याहा हैते अन्य 'विज्ञ' नाहि——से 'अज्ञ' हय ॥ १४१ ॥

वन्द्य-अभावे—क्योंकि और कोई नहीं है जिसको प्रणाम किया जा सके; **अनम्र**—जो वन्दना नहीं करता; **स्तब्ध-शब्दे**—'स्तब्ध' शब्द द्वारा; **कय**—कहता है; **ग्राहा हैते**—जिसकी अपेक्षा; **अन्य**—अन्य; **विज्ञ**—विद्वान; **नाहि**—नहीं; **से**—वे; **अज्ञ**—जिसके लिए कुछ भी अज्ञात नहीं; **हय**—है।

अनुवाद

"जब नमस्कार ग्रहण करने वाला कोई न हो, तो वह 'अनम्र' कहलाता है, अर्थात् वह जो किसी अन्य को नमस्कार नहीं करता। 'स्तब्ध' का यही अर्थ है। और चूँकि कृष्ण से बढ़कर कोई पण्डित नहीं है, इसलिए वे 'अज्ञ' कहे जा सकते हैं, जो यह सूचित करता है कि उनसे कुछ भी अज्ञात नहीं है।

'पण्डितेर मान्य-पात्र——हय 'पण्डित-मानी' ।
तथापि भक्त-वात्सल्ये 'मनुष्य' अभिमानी ॥ १४२॥

'पण्डितेर मान्य-पात्र——हय 'पण्डित-मानी' ।
तथापि भक्त-वात्सल्ये 'मनुष्य' अभिमानी ॥ १४२॥

पण्डितेर—विद्वानों का; **मान्य-पात्र**—सम्मान का पात्र; **हय**—है; **पण्डित-मानी**—विद्वानों द्वारा सम्मानित व्यक्ति; **तथापि**—फिर भी; **भक्त-वात्सल्ये**—भक्तों के प्रति अत्यन्त स्नेहशील होने के कारण; **मनुष्य अभिमानी**—स्वयं को साधारण मनुष्य जैसा दिखाते हैं।

अनुवाद

"'पण्डित-मानी' शब्द का प्रयोग यह सूचित करने के लिए किया जा सकता है कि विद्वान पण्डित भी कृष्ण का आदर करते हैं। तो भी, अपने भक्तों के प्रति स्नेह के कारण कृष्ण सामान्य व्यक्ति की तरह प्रकट होते हैं, इसलिए उन्हें 'मर्त्य' कहा जा सकता है।

जरासन्ध कहे,——"कृष्ण——पुरुष-अधम ।
तोर सङ्गे ना युझिमु, "याहि बन्धु-हन्" ॥ १४३॥

जरासन्ध कहे,——"कृष्ण——पुरुष-अधम ।
तोर सङ्गे ना युझिमु, "ग्राहि बन्धु-हन्" ॥ १४३॥

जरासन्ध कहे—जरासंध कहता है; **कृष्ण**—कृष्ण; **पुरुष-अधम**—मनुष्यों में अधम है; **तोर सङ्गे**—तुम्हारे साथ; **ना युझिमु**—मैं युद्ध नहीं करूँगा; **याहि**—क्योंकि; **बन्धु-हन्**—अपने सम्बन्धियों का हत्यारा।

अनुवाद

"असुर जरासन्ध ने यह कहकर कृष्ण की भर्त्सना की कि, 'तुम मनुष्यों में अधम हो। मैं तुमसे युद्ध नहीं करूँगा, क्योंकि तुमने अपने ही सम्बन्धियों का वध किया है।'

तात्पर्य

इस श्लोक में भी माता सरस्वती कृष्ण की स्तुति करती हैं। *पुरुष-अधम* शब्द पुरुषोत्तम भगवान् का द्योतक है, जिनके अधीन सारे मनुष्य रहते हैं अथवा दूसरे शब्दों में, वे *पुरुष उत्तम*—सर्व जीवों में श्रेष्ठ हैं। इसी तरह *बन्धुहन्* शब्द का अर्थ है "माया का वध करने वाला।" बद्ध जीवन की अवस्था में मनुष्य माया के साथ बन्धु (मित्र) की तरह सम्बन्धित रहता है, किन्तु जब वह कृष्ण के सम्पर्क में आता है, तो उस सम्बन्ध से मुक्त हो जाता है।

যাহা হৈতে অন্য পুরুষ-সকল——'অধম' ।
সেই হয় 'পুরুষাধম'——সরস্বতীর মন ॥ ১৪৪॥

যাহা হৈতে অন্য পুরুষ-সকল——'অধম' ।
সেই হয় 'পুরুষাধম'——সরস্বতীর মন ॥ ১৪৪॥

যাহা হৈতে—जिससे; **অন্য**—अन्य; **পুরুষ**—व्यक्ति; **সকল**—सभी; **অধম**—अधीन; **সেই**—वह; **হয়**—हैं; **পুরুষ-অধম**—वह व्यक्ति जिसके अधीन सभी रहते हैं; **সরস্বতীর মন**—माता सरस्वती की व्याख्या।

अनुवाद

"माता सरस्वती 'पुरुषाधम' का अर्थ पुरुषोत्तम लगाती हैं—'वह जिसके अधीन सारे मनुष्य हैं।'

'বান্ধে সবারে'——তাতে অবিদ্যা 'বন্ধু' হয় ।
'অবিদ্যা-নাশক'——'বন্ধু-হন্'-শব্দে কয় ॥ ১৪৫॥
'বান্ধে সবারে'——তাতে অবিদ্যা 'বন্ধু' হয় ।
'অবিদ্যা-নাশক'——'বন্ধু-হন্'-শব্দে কয় ॥ ১৪৫॥

बान्धे—बाँधती हैं; **सबारे**—सब को; **ताते**—अतः; **अविद्या**—अज्ञान या माया; **बन्धु**—बाँधनेवाली या सम्बन्धी; **हय**—है; **अविद्या-नाशक**—माया का नाशकर्ता; **बन्धु-हन्-शब्दे**—*बन्धु-हन्* शब्द द्वारा; **कय**—माता सरस्वती कहती है।

अनुवाद

"अविद्या या माया को 'बन्धु' कहा जा सकता है, क्योंकि इस भौतिक जगत् में वह हर एक को बाँधती है। इसलिए 'बन्धु-हन्' शब्द का प्रयोग करके माता सरस्वती कहना चाहती हैं कि कृष्ण माया के नाशकर्ता हैं।

तात्पर्य

हर व्यक्ति माया में बद्ध है, किन्तु जैसाकि *भगवद्गीता* (७.१४) में कहा गया है—*मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते*—जैसे ही कोई कृष्ण की शरण ग्रहण करता है, वह माया से मुक्त हो जाता है। इसीलिए कृष्ण को *बन्धु-हन्* अर्थात् माया का नाशकर्ता कहा जा सकता है।

এই-মত শিশুপাল করিল নিন্দন ।
সেই-বাক্যে সরস্বতী করেন স্তবন ॥ ১৪৬॥

এइ-মত শিশুপাল করিল নিন্দন ।
সেই-বাক্যে সরস্বতী করেন স্তবন ॥ ১৪৬॥

এइ-মত—इसी प्रकार; **शिशुपाल**—शिशुपाल; **करिल निन्दन**—निन्दा की; **सेइ-वाक्ये**—उन शब्दों द्वारा; **सरस्वती**—विद्या की देवी ने; **करेन स्तवन**—प्रार्थनाएँ बनाईं।

अनुवाद

"इसी तरह शिशुपाल ने भी कृष्ण की निन्दा की, किन्तु विद्या की देवी सरस्वती ने उसी के शब्दों द्वारा कृष्ण की स्तुति की।

তৈছে এই শ্লোকে তোমার অর্থে 'নিন্দা' আইসে ।
সরস্বতীর অর্থ শুন, যাতে 'স্তুতি' ভাসে ॥ ১৪৭॥

তৈছে এइ শ্লোকে তোমার অর্থে 'নিন্দা' আइসে ।
সরস্বতীর অর্থ শুন, য়াতে 'স্তুতি' ভাসে ॥ ১৪৭॥

तैछे—इस प्रकार; **एइ श्लोके**—इस श्लोक में; **तोमार**—तुम्हारे; **अर्थे**—अर्थ द्वारा; **निन्दा**—निन्दा; **आइसे**—आती है; **सरस्वतीर अर्थ**—माता सरस्वती का अर्थ; **शुन**—सुनो; **याते**—जिसके द्वारा; **स्तुति**—प्रार्थनाएँ; **भासे**—प्रतीत हों।

अनुवाद

"इसी तरह यद्यपि तुम्हारे अर्थ के अनुसार तुम्हारा श्लोक निन्दापरक है, किन्तु माता सरस्वती इसका लाभ भगवान् की स्तुति करने में उठाती हैं।

जगन्नाथ हन कृष्णेर 'आत्म-स्वरूप' ।
किन्तु इहाँ दारु-ब्रह्म——स्थावर-स्वरूप ॥ १४८ ॥

जगन्नाथ हन कृष्णेर 'आत्म-स्वरूप' ।
किन्तु इहाँ दारु-ब्रह्म——स्थावर-स्वरूप ॥ १४८ ॥

जगन्नाथ—भगवान् जगन्नाथ; **हन**—हैं; **कृष्णेर आत्म-स्वरूप**—कृष्ण से अभिन्न; **किन्तु**—किन्तु; **इहाँ**—जगन्नाथ पुरी में; **दारु-ब्रह्म**—परम भगवान् काष्ठ के रूप में प्रकट; **स्थावर-स्वरूप**—अचल स्वरूप।

अनुवाद

"भगवान् जगन्नाथ एवं कृष्ण में कोई अन्तर नहीं है, किन्तु यहाँ पर भगवान् जगन्नाथ काष्ठ में प्रकट होने वाले परम पुरुष के रूप में स्थिर हैं। इसलिए वे गति नहीं करते।

তাঁহা-সহ আত্মতা এক-রূপ হঞা ।
কৃষ্ণ এক-তত্ত্ব-রূপ——দুই রূপ হঞা ॥ ১৪৯ ॥

তাঁহা-সহ আত্মতা এক-রূপ হঞা ।
কৃষ্ণ এক-তত্ত্ব-রূপ——দুই রূপ হঞা ॥ ১৪৯ ॥

তাঁহা-সহ—उनके साथ; **आत्मता**—आत्मा होने का गुण; **एक-रूप हञा**—एक स्वरूप; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **एक-तत्त्व-रूप**—एक सिद्धान्त; **दुइ**—दो; **रूप**—रूप; **हञा**—होकर।

अनुवाद

"इस तरह भगवान् जगन्नाथ तथा श्री चैतन्य महाप्रभु दो दिखते हुए भी एक हैं, क्योंकि दोनों ही कृष्ण हैं, जो केवल एक हैं।

সংসার-তারণ-হেতু যেই ইচ্ছা-শক্তি ।
তাহার মিলন করি' একতা যৈছে প্রাপ্তি ॥ ১৫০ ॥

संसार-तारण-हेतु येइ इच्छा-शक्ति ।
ताहार मिलन करि' एकता ग्रैछे प्राप्ति ॥ १५० ॥

संसार-तारण-हेतु—समस्त जगत् का उद्धार करने के लिए; **ग्रेइ**—जो; **इच्छा-शक्ति**—इच्छा शक्ति; **ताहार**—उस इच्छा के; **मिलन करि'**—मिलन द्वारा; **एकता**—एकता; **ग्रैछे**—ताकि; **प्राप्ति**—प्राप्त हो।

अनुवाद

"दोनों में समस्त संसार का उद्धार करने की परम इच्छा मिलती है और इसलिए भी वे एक ही हैं।

সকল সংসারী লোকের করিতে উদ্ধার ।
গৌর-জঙ্গম-রূপে কৈলা অবতার ॥ ১৫১ ॥

सकल संसारी लोकेर करिते उद्धार ।
गौर-जङ्गम-रूपे कैला अवतार ॥ १५१ ॥

सकल—सभी; **संसारी**—भौतिक दूषणों से युक्त; **लोकेर**—लोगों का; **करिते उद्धार**—उद्धार करने के लिए; **गौर**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **जङ्गम**—सचल; **रूपे**—रूप में; **कैला अवतार**—अवतरित हुए हैं।

अनुवाद

"संसार के समस्त दूषित लोगों का उद्धार करने के लिए वही कृष्ण अवतरित हुए हैं और श्री चैतन्य महाप्रभु के रूप में विचरण कर रहे हैं।

জগন্নাথের দর্শনে খণ্ডায় সংসার ।
সব-দেশের সব-লোক নারে আসিবার ॥ ১৫২ ॥

जगन्नाथेर दर्शने खण्डाय संसार ।
सब-देशेर सब-लोक नारे आसिबार ॥ १५२ ॥

जगन्नाथेर—भगवान् जगन्नाथ के; **दर्शने**—दर्शन द्वारा; **खण्डाय संसार**—भौतिक अस्तित्व से मुक्ति हो जाती है; **सब-देशेर**—सभी देशों के; **सब-लोक**—सभी लोग; **नारे आसिबार**—आ नहीं सकते।

अनुवाद

"भगवान् जगन्नाथ का दर्शन करने से मनुष्य भौतिक अस्तित्व से छूट जाता है, किन्तु न तो सारे देशों के सारे लोग जगन्नाथ पुरी आ सकते हैं, न ही उनको प्रवेश दिया जा सकता है।

श्री-कृष्ण-चैतन्य-प्रभु देशे देशे याञा ।
सब-लोके निस्तारिला जङ्गम-ब्रह्म हञा ॥ १५३ ॥

श्री-कृष्ण-चैतन्य-प्रभु देशे देशे याञा ।
सब-लोके निस्तारिला जङ्गम-ब्रह्म हञा ॥ १५३ ॥

श्री-कृष्ण-चैतन्य-प्रभु—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **देशे देशे याञा**—एक देश से दूसरे देश घूमकर; **सब-लोके निस्तारिला**—सभी बद्धजीवों का उद्धार किया; **जङ्गम-ब्रह्म**—सचल ब्रह्म; **हञा**—बनकर।

अनुवाद

"किन्तु श्री चैतन्य महाप्रभु स्वयं या अपने प्रतिनिधियों द्वारा एक देश से दूसरे देश में जाते हैं। इस तरह वे गतिशील ब्रह्म की तरह संसार के समस्त लोकों का उद्धार करते हैं।

सरस्वतीर अर्थ एइ कहिलुँ विवरण ।
एहो भाग्य तोमार ऐछे करिले वर्णन ॥ १५४ ॥

सरस्वतीर अर्थ एइ कहिलुँ विवरण ।
एहो भाग्य तोमार ऐछे करिले वर्णन ॥ १५४ ॥

सरस्वतीर—सरस्वती का; **अर्थ**—अर्थ; **एइ**—यह; **कहिलुँ विवरण**—मैंने वर्णन किया; **एहो**—यह; **भाग्य**—महाभाग्य; **तोमार ऐछे**—तुम्हारा है; **करिले वर्णन**—तुमने वर्णन किया।

अनुवाद

"इस तरह मैंने माता सरस्वती द्वारा इच्छित अर्थ की व्याख्या की है। यह तुम्हारा परम सौभाग्य है कि तुमने इस तरह भगवान् जगन्नाथ तथा श्री चैतन्य महाप्रभु का वर्णन किया है।

কৃষ্ণে গালি দিতে করে নাম উচ্চারণ ।
সেই নাম হয় তার 'মুক্তির' কারণ'' ॥ ১৫৫ ॥

কৃষ্ণে গালি দিতে করে নাম উচ্চারণ ।
সেই নাম হয় তার 'মুক্তির' কারণ" ॥ ১৫৫ ॥

কৃষ্ণে—भगवान् कृष्ण की; **গালি দিতে**—निन्दा करने में; **করে নাম উচ্চারণ**—कृष्ण का नाम उच्चारण करता है; **সেই নাম**—वही पवित्र नाम; **হয়**—बन जाता है; **তার**—उसकी; **মুক্তির কারণ**—मुक्ति का कारण।

अनुवाद

"कभी-कभी ऐसा होता है कि जो व्यक्ति कृष्ण की भर्त्सना करना चाहता है, वह पवित्र नाम का उच्चारण करता है और इस तरह वह नाम उसकी मुक्ति का कारण बन जाता है।"

তবে সেই কবি সবার চরণে পড়িয়া ।
সবার শরণ লৈল দন্তে তৃণ লঞা ॥ ১৫৬ ॥

তবে সেই কবি সবার চরণে পড়িয়া ।
সবার শরণ লৈল দন্তে তৃণ লঞা ॥ ১৫৬ ॥

তবে—फिर; **সেই**—उस; **কবি**—कवि ने; **সবার**—सभी के; **চরণে**—चरणों में; **পড়িয়া**—गिरकर; **সবার**—सभी भक्तों की; **শরণ লৈল**—शरण ले ली; **দন্তে**—मुख में; **তৃণ লঞা**—तिनका लेकर।

अनुवाद

स्वरूप दामोदर गोस्वामी द्वारा इस उचित व्याख्या को सुनकर बंगाली कवि समस्त भक्तों के चरणों पर गिर पड़ा और अपने मुँह में तिनका दबाकर उसने सबकी शरण ग्रहण की।

তবে সব ভক্ত তারে অঙ্গীকার কৈলা ।
তার গুণ কহি' মহাপ্রভুরে মিলাইলা ॥ ১৫৭ ॥

তবে সব ভক্ত তারে অঙ্গীকার কৈলা ।
তার গুণ কহি' মহাপ্রভুরে মিলাইলা ॥ ১৫৭ ॥

तबे—फिर; **सब भक्त**—सभी भक्तों ने; **तारे**—उसे; **अङ्गीकार कैला**—अपने संगियों में से एक के रूप में स्वीकार किया; **तार गुण कहि'**—उसका विनम्र आचरण वर्णित करके; **महाप्रभुरे मिलाइला**—उसे श्री चैतन्य महाप्रभु से मिलवाया।

अनुवाद

तब सारे भक्तों ने उसकी संगति स्वीकार की। उसके विनीत स्वभाव की बातें करते हुए उन्होंने श्री चैतन्य महाप्रभु से उसका परिचय कराया।

सेइ कवि सर्व त्यजि' रहिला नीलाचले ।
गौर-भक्त-गणेर कृपा के कहिते पारे? ॥ १५८॥

सेइ कवि सर्व त्यजि' रहिला नीलाचले ।
गौर-भक्त-गणेर कृपा के कहिते पारे? ॥ १५८॥

सेइ कवि—वह कवि; **सर्व त्यजि'**—सब मूर्खतापूर्ण कार्य छोड़कर; **रहिला**—रहने लगा; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी में; **गौर-भक्त-गणेर**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्तों की; **कृपा**—दया; **के**—कौन; **कहिते पारे**—वर्णन कर सकता है।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्तों की कृपा से उस बंगाली कवि ने अन्य सारे कार्य त्याग दिये और वह उनके साथ जगन्नाथ पुरी में रहने लगा। भला श्री चैतन्य महाप्रभु के भक्तों की कृपा को कौन बतला सकता है?

एइ त' कहिलुँ प्रद्युम्न-मिश्र-विवरण ।
प्रभुर आज्ञाय कैल कृष्ण-कथार श्रवण ॥ १५९॥

एइ त' कहिलुँ प्रद्युम्न-मिश्र-विवरण ।
प्रभुर आज्ञाय कैल कृष्ण-कथार श्रवण ॥ १५९॥

एइ त' कहिलुँ—इस प्रकार मैंने वर्णन किया है; **प्रद्युम्न-मिश्र-विवरण**—प्रद्युम्न मिश्र का विवरण; **प्रभुर आज्ञाय**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु के आदेश पर; **कैल**—किया; **कृष्ण-कथार श्रवण**—कृष्ण विषयक कथाओं का श्रवण।

अनुवाद

इस प्रकार मैंने प्रद्युम्न मिश्र की कथा का और जिस तरह श्री चैतन्य

महाप्रभु की आज्ञा के अनुसार उसने रामानन्द राय द्वारा कही गई कृष्ण विषयक वार्ताएँ सुनीं, उसका वर्णन किया है।

তার মধ্যে কহিলুঁ রামানন্দের মহিমা ।
আপনে শ্রী-মুখে প্রভু বর্ণে যাঁর সীমা ॥ ১৬০ ॥

তার মধ্যে কহিলুঁ রামানন্দের মহিমা ।
আপনে শ্রী-মুখে প্রভু বর্ণে য়াঁর সীমা ॥ ১৬০ ॥

তার মধ্যে—इन व्याख्यानों में; **কহিলুঁ**—मैंने वर्णन किया है; **রামানন্দের মহিমা**—रामानन्द राय की महिमा; **আপনে**—स्वयं; **শ্রী-মুখে**—अपने मुख से; **প্রভু**—महाप्रभु ने; **বর্ণে**—वर्णन किया; **য়াঁর**—जिनके; **সীমা**—प्रेमभाव की सीमा का।

अनुवाद

इसी कथा के बीच में मैंने श्री रामानन्द राय के यशस्वी गुणों का वर्णन किया है, जिनके माध्यम से श्री चैतन्य महाप्रभु ने स्वयं कृष्ण-प्रेम की सीमाओं का वर्णन किया है।

প্রস্তাবে কহিলুঁ কবির নাটক-বিবরণ ।
অজ্ঞ হঞা শ্রদ্ধায় পাইল প্রভুর চরণ ॥ ১৬১ ॥

প্রস্তাবে কহিলুঁ কবির নাটক-বিবরণ ।
অজ্ঞ হঞা শ্রদ্ধায় পাইল প্রভুর চরণ ॥ ১৬১ ॥

প্রস্তাবে—साथ ही; **কহিলুঁ**—मैंने वर्णन किया; **কবির**—कवि का; **নাটক-বিবরণ**—नाटक का विवरण; **অজ্ঞ হঞা**—अज्ञानी होते हुए भी; **শ্রদ্ধায়**—विश्वास और प्रेम से; **পাইল**—प्राप्त किया; **প্রভুর চরণ**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों की शरण।

अनुवाद

इस कथा के मध्य मैंने बंगाली कवि के नाटक के विषय में भी कहा है। यद्यपि वह अज्ञानी था, किन्तु अपनी श्रद्धा तथा दीनता के कारण उसने श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों की शरण प्राप्त की।

শ্রী-কৃষ্ণ-চৈতন্য-লীলা—অমৃতের সার ।
এক-লীলা-প্রবাহে বহে শত-শত ধার ॥ ১৬২ ॥

श्री-कृष्ण-चैतन्य-लीला—अमृतेर सार ।
एक-लीला-प्रवाहे वहे शत-शत धार ॥ १६२ ॥

श्री-कृष्ण-चैतन्य-लीला—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाएँ; **अमृतेर सार**—अमृत का सार; **एक-लीला**—एक लीला के; **प्रवाहे**—प्रवाह द्वारा; **वहे**—बहती हैं; **शत-शत धार**—सैंकड़ों धाराएँ।

अनुवाद

श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु की लीलाएँ अमृत की सार हैं। उनकी एक लीला की धारा से सैकड़ों-हजारों शाखाएँ बहती हैं।

श्रद्धा करि' एই লীলা যেই পড়ে, শুনে ।
গৌর-লীলা, ভক্তি-ভক্ত-রস-তত্ত্ব জানে ॥ ১৬৩ ॥

श्रद्धा करि' एइ लीला येइ पड़े, शुने ।
गौर-लीला, भक्ति-भक्त-रस-तत्त्व जाने ॥ १६३ ॥

श्रद्धा करि'—विश्वास और प्रेम के साथ; **एइ लीला**—ये लीलाएँ; **येइ**—जो कोई भी; **पड़े शुने**—पढ़ता और सुनता है; **गौर-लीला**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाएँ; **भक्ति-भक्त-रस-तत्त्व**—भक्ति, भक्तों और उनके दिव्य रसों के विषय में सब सत्य; **जाने**—जान सकता है।

अनुवाद

जो व्यक्ति श्रद्धा तथा प्रेमपूर्वक इन लीलाओं को पढ़ता तथा सुनता है, वह भक्ति, भक्त तथा श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाओं के दिव्य रसों के सत्य को समझ सकता है।

শ্রী-রূপ-রঘুনাথ-পদে যার আশ ।
চৈতন্য-চরিতামৃত কহে কৃষ্ণদাস ॥ ১৬৪ ॥

श्री-रूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्य-चरितामृत कहे कृष्णदास ॥ १६४ ॥

श्री-रूप—श्रील रूप गोस्वामी के; **रघुनाथ**—श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी के; **पदे**—चरणकमलों में; **यार**—जिसकी; **आश**—आशा; **चैतन्य-चरितामृत**—*चैतन्य चरितामृत* नामक ग्रन्थ; **कहे**—वर्णन करते हैं; **कृष्णदास**—श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी।

अनुवाद

श्रीरूप तथा श्री रघुनाथ के चरणकमलों की वन्दना करते हुए तथा सदैव उनकी कृपा की कामना करते हुए मैं कृष्णदास उनके चरणचिह्नों पर चलकर श्री चैतन्य-चरितामृत का वर्णन कर रहा हूँ।

इस प्रकार श्री चैतन्य-चरितामृत अन्त्य-लीला के पाँचवे अध्याय का भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुआ, जिसमें यह वर्णन हुआ है कि प्रद्युम्न मिश्र ने किस तरह रामानन्द राय से उपदेश प्राप्त किया ।